॥ॐ॥
॥श्री परमात्मने नम: ॥
॥श्री गणेशाय नमः॥

॥ अथर्ववेद संहिता ॥

॥ अथर्ववेद ॥

॥ अथ तृतीय काण्डम् ॥

श्री हिंदू धर्म वैदिक एजुकेशन फाउंडेशन

॥ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥

विषय सूची

सूक्त १ – शत्रुसेनासम्मोहन सूक्त 5
सूक्त २- शत्रुसेनासंमोहन सूक्त 9
सूक्त ३ – स्वराजपुनः स्थापन सूक्त 12
सूक्त ४ – राजासंवरण सूक्त 15
सूक्त ५ – राजा और राजकृत सूक्त 19
सूक्त ६- शत्रुनाशन सूक्त 23
सूक्त ७- यक्ष्मनाशन सूक्त 27
सूक्त ८- राष्ट्रधारण सूक्त 31
सूक्त ९- दुःखनाशन सूक्त 35
सूक्त १० – रायस्पोषप्राप्ति सूक्त 38
सूक्त ११ – दीर्घायुप्राप्ति सूक्त 44
सूक्त १२ – शालानिर्माण सूक्त 48
सूक्त १३- आपो देवता सूक्त 53
सूक्त १४- गोष्ट सूक्त 57
सूक्त १५- वाणिज्य सूक्त 60
सूक्त १६- कल्याणार्थप्रार्थना सूक्त 65
सूक्त १७- कृषि सूक्त 69

सूक्त १८- वनस्पति सूक्त 74
सूक्त १९- अजरक्षत्र सूक्त 77
सूक्त २०- रयिसंवर्धन सूक्त 81
सूक्त २१- शान्ति सूक्त 86
सूक्त २२- वर्चः प्राप्ति सूक्त 91
सूक्त २३- वीरप्रसूति सूक्त 94
सूक्त २४- समृद्धिप्राप्ति सूक्त 97
सूक्त २५- कामबाण सूक्त 101
सूक्त २६- दिक्षु आत्मरक्षा सूक्त 104
सूक्त २७- शत्रुनिवारण सूक्त 108
सूक्त २८- पशुपोषण सूक्त 113
सूक्त २९ – अवि सूक्त 117
सूक्त ३०- सांमनस्य सूक्त 122
सूक्त ३१- यक्ष्मनाशन सूक्त 126

॥अथर्ववेद – तृतीय काण्डम्॥

सूक्त १ – शत्रुसेनासम्मोहन सूक्त

अग्नि, मरुत व इंद्र देव की स्तुति

अग्निर्नः शत्रून् प्रत्येतु विद्वान् प्रतिदहन्न् अभिशस्तिमरातिम्।
स सेनां मोहयतु परेषां निर्हस्तांश्च कृणवज्जातवेदाः ॥३,१.१॥

ज्ञानी अग्निदेव (अथवा अग्रणी वीर) विनाश के लिए उद्यत शत्रु सेनाओं के चित्त को भ्रमित करके, उनके हाथों को शस्त्र रहित कर दें । वह शत्रुओं के अंगों को जलाते (नष्ट करते हुए आगे बढ़े ॥३,१.१॥

यूयमुग्रा मरुत ईदृशे स्थाभि प्रेत मृणत सहध्वम् ।
अमीमृणन् वसवो नाथिता इमे अग्निर्ह्येषां दूतः प्रत्येतु विद्वान्
॥३,१.२॥

हे मरुतो !आप ऐसे (संग्राम) में उग्र होकर (हमारे पास स्थित रहें । आप आगे बढ़ें, प्रहार (शत्रुओं) को जीत लें । यह वसुगण भी शत्रु विनाशक हैं । इनके संदेशवाहक विद्वान् अग्निदेव भी शत्रुओं की ओर ही अग्रगामी हों ॥३,१.२॥

अमित्रसेनां मघवन्न् अस्मान् छत्रूयतीमभि ।
युवं तामिन्द्र वृत्रहन्न् अग्निश्च दहतं प्रति ॥३,१.३॥

हे ऐश्वर्यवान् इन्द्रदेव ! आप वृत्र का संहार करने वाले हैं। आप और अग्निदेव दोनों मिलकर हमसे शत्रुता करने वाली शत्रु सेनाओं को परास्त करके उन्हें भस्मसात् कर दें ॥३,१.३॥

प्रसूत इन्द्र प्रवता हरिभ्यां प्र ते वज्रः प्रमृणन्न् एतु शत्रून् ।
जहि प्रतीचो अनूचः पराचो विष्वक्सत्यं कृणुहि चित्तमेषाम् ॥३,१.४॥

है इन्द्रदेव ! हरि नामक अश्वों से गतिमान् आपका रथ ढालू मार्ग से वेगपूर्वक शत्रु सेना की ओर बढ़े । आप अपने प्रचण्ड वज्र से शत्रुओं पर प्रहार करें। आप सामने से आते हुए तथा मुख मोड़कर जाते हुए सभी शत्रुओं पर प्रहार करें । युद्ध में संलग्न शत्रुओं के चित्त को आप विचलित कर दें ॥३,१.४॥

इन्द्र सेनां मोहयामित्राणाम् ।
अग्नेर्वातस्य ध्राज्या तान् विषूचो वि नाशय ॥३,१.५॥

हे इन्द्रदेव ! आप शत्रुओं की सेनाओं को भ्रमित करें । उसके बाद अग्नि और वायु के प्रचण्ड वेग से उन (शत्रु सेनाओं को चारों ओर से भगाकर विनष्ट कर दें ॥३,१.५॥

इन्द्रः सेनां मोहयतु मरुतो घ्नन्त्वोजसा ।
चक्षूंस्यग्निरा दत्तां पुनरेतु पराजिता ॥३,१.६॥

हे इन्द्रदेव ! आप शत्रु सेनाओं को सम्मोहित करें और मरुद्गण बलपूर्वक उनका विनाश करें । अग्निदेव उनकी

आँखों (नेत्र ज्योति) को हर लें। इस प्रकार परास्त होकर शत्रु सेना वापस लौट जाए ॥३,१.६॥

सूक्त २- शत्रुसेनासंमोहन सूक्त

अग्नि, इंद्र और मरुत् से शत्रुओं का विनाश करने का अनुरोध

अग्निर्नो दूतः प्रत्येतु विद्वान् प्रतिदहन्न् अभिशस्तिमरातिम् ।
स चित्तानि मोहयतु परेषां निर्हस्तांश्च कृणवज्जातवेदाः ॥३,२.१॥

देवदूत के सदृश अग्रणी तथा विद्वान् अग्निदेव हमारे शत्रुओं को जलाते हुए उनकी ओर बढ़े। वह शत्रुओं के चित्त को भ्रमित करें तथा उनके हाथों को आयुधों से रहित करें ॥३,२.१॥

अयमग्निरमूमुहद्यानि चित्तानि वो हृदि ।
वि वो धमत्वोकसः प्र वो धमतु सर्वतः ॥३,२.२॥

हे शत्रुओ ! तुम्हारे हृदय में जो विचार-समूह हैं, उनको अग्निदेव सम्मोहित कर दें तथा तुम्हें तुम्हारे निवास स्थानों से दूर हटा दें ॥३,२.२॥

इन्द्र चित्तानि मोहयन्न् अर्वाङाकूत्या चर ।
अग्नेर्वातस्य ध्राज्या तान् विषूचो वि नाशय ॥३,२.३॥

हे इन्द्रदेव ! आप शत्रुओं के मनों को सम्मोहित करते हुए शुभ संकल्पों के साथ हमारे समीप पधारें । उसके बाद अग्निदेव एवं वायुदेव के प्रचण्ड वेग से उन शत्रुओं की सेनाओं को चारों ओर से विनष्ट कर दें ॥३,२.३॥

व्याकूतय एषामिताथो चित्तानि मुह्यत ।
अथो यदद्यैषां हृदि तदेषां परि निर्जहि ॥३,२.४॥

आप शत्रुओं के मन में गमन करें । हे शत्रुओं के मन ! आप मोहग्रस्त हों । हे इन्द्रदेव ! युद्ध के लिए उच्चत शत्रुओं के संकल्पों को आप पूर्णतया विनष्ट कर दें ॥३,२.४॥

अमीषां चित्तानि प्रतिमोहयन्ती गृहाणाङ्गान्यप्वे परेहि ।
अभि प्रेहि निर्दह हृत्सु शोकैर्ग्राह्यामित्रांस्तमसा विध्य शत्रून्
॥३,२.५॥

हे अप्वे (पापवृत्ति या व्याधि) !तुम शत्रुओं को सम्मोहित करते हुए उनके शरीरों में व्याप्त हो जाओ । हे अप्वे !तुम आगे बढ़ो और उनके हृदयों को शोक से दग्ध करो, उन्हें जकड़कर पीड़ित करते हुए विनष्ट कर डालो ॥३,२.५॥

असौ या सेना मरुतः परेषामस्मान् ऐत्यभ्योजसा स्पर्धमाना।
तां विध्यत तमसापव्रतेन यथैषामन्यो अन्यं न जानात्॥३,२.६॥

हे मरुतो !जो शत्रु सेनाएँ अपनी सामर्थ्य के मद में स्पर्धापूर्वक हमारी ओर आ रहीं हैं, उन सेनाओं को आप अपने कर्महीन करने वाले अधिकार से सम्मोहित करें, जिससे इनमें से कोई भी शत्रु एक-दूसरे को पहचान न सके ॥३,२.६॥

॥अथर्ववेद – तृतीय काण्डम्॥

सूक्त ३ – स्वराजपुनः स्थापन सूक्त

अग्नि की स्तुति

अचिक्रदत्स्वपा इह भुवदग्ने व्यचस्व रोदसी उरूची ।
युञ्जन्तु त्वा मरुतो विश्ववेदस आमुं नय नमसा रातहव्यम् ॥३,३.१॥

हे अग्निदेव ! यह (जीव या पदेच्छु व्यक्ति या राजा) स्वयं का पालन-रक्षण करने वाला हो-ऐसी घोषणा की गई है। आप सम्पूर्ण द्यावा-पृथिवीं में व्याप्त हों । मरुद्गण और विश्वेदेवा आपके साथ संयुक्त हों । आप नम्रतापूर्वक हविदाता को यहाँ लाएँ, स्थापित करें ॥३,३.१॥

दूरे चित्सन्तमरुषास इन्द्रमा च्यावयन्तु सख्याय विप्रम् ।
यद्गायत्रीं बृहतीमर्कमस्मै सौत्रामण्या दधृषन्त देवाः ॥३,३.२॥

हे तेजस्विन् ! आप इस तेजस्वी की मित्रता के लिए दूरस्थ ज्ञानी इन्द्रदेव को यहाँ लाएँ । समस्त देवताओं ने गायत्री छन्द, बृहती छन्द तथा सौत्रामणी यज्ञ के माध्यम से इसे धारण किया है ॥३,३.२॥

अद्भ्यस्त्वा राज वरुणो ह्वयतु सोमस्त्वा ह्वयतु पर्वतेभ्यः ।
इन्द्रस्त्वा ह्वयतु विड्भ्य आभ्यः श्येनो भूत्वा विश आ पतेमाः
॥३,३.३॥

हे तेजस्विन् ! वरुणदेव जल के लिए, सोमदेव पर्वतों के लिए तथा इन्द्रदेव प्रजाओं (आश्रितों को प्राणवान् बनाने के लिए आपको बुलाएँ। आप श्येन की गति से इन विशिष्ट स्थानों पर आएँ ॥३,३.३॥

श्येनो हव्यं नयत्वा परस्मादन्यक्षेत्रे अपरुद्धं चरन्तम् ।
अश्विना पन्थां कृणुतां सुगं त इमं सजाता अभिसंविशध्वम्
॥३,३.४॥

स्वर्ग में निवास करने वाले देवता, अन्य क्षेत्रों में विचरने वाले हव्य (बुलाने योग्य या हवनीय) को श्येन के समान द्रुतगति

से अपने देश में ले आएँ । हे तेजस्विन् ! आपके मार्ग को दोनों अश्विनीकुमार सुख से आने योग्य बनाएँ। सजातीय (व्यक्ति या तत्त्व) इसे उपयुक्त स्थल में प्रविष्ट कराएँ ॥३,३.४॥

ह्वयन्तु त्वा प्रतिजनाः प्रति मित्रा अवृषत ।
इन्द्राग्नी विश्वे देवास्ते विशि क्षेममदीधरन् ॥३,३.५॥

हे तेजस्विन् ! प्रतिकूल चलने वाले भी (आपका महत्त्व समझकर) आपको बुलाएँ । मित्रजन आपको संवर्द्धित करें । इन्द्राग्नि तथा विश्वेदेवा आपके अन्दर क्षेम (पाल-संरक्षण) की क्षमता धारण कराएँ ॥३,३.५॥

यस्ते हवं विवदत्सजातो यश्च निष्ट्यः ।
अपाञ्चमिन्द्र तं कृत्वाथेममिहाव गमय ॥३,३.६॥

हे इन्द्रदेव ! सभी विजातीय और सजातीय जन आपके आङ्खनीय पक्ष की समीक्षा करें । उस (अवांछनीय) को बहिष्कृत करके, इस (वांछनीय) को यहाँ ले आएँ ॥३,३.६॥

सूक्त ४ – राजासंवरण सूक्त

इंद्र देव से राजा, राज्य पुनः प्राप्त होना

आ त्वा गन् राष्ट्रं सह वर्चसोदिहि प्राङ्विशां पतिरेकराट्त्वं वि राज ।
सर्वास्त्वा राजन् प्रदिशो ह्वयन्तूपसद्यो नमस्यो भवेह ॥३,४.१॥

हे राजन् ! (तेजस्वी) यह राष्ट्र (प्रकाशवान् अधिकार क्षेत्र) आपको पुन: प्राप्त हो गया है। आप वर्चस्वपूर्वक अभ्युदय को प्राप्त करें। आप प्रजाओं के स्वामी तथा उनके एक मात्र अधिपति बनकर सुशोभित हों । समस्त दिशाएँ तथा उपदिशाएँ आपको पुकारें । आप यहाँ (अपने क्षेत्र में) सबके लिए वन्दनीय बने ॥३,४.१॥

त्वां विशो वृणतां राज्याय त्वामिमाः प्रदिशः पञ्च देवीः ।

वर्ष्मन् राष्ट्रस्य ककुदि श्रयस्व ततो न उग्रो वि भजा वसूनि ॥३,४.२॥

हे तेजस्विन् !यह प्रजाएँ आपको शासन का संचालन करने के लिए स्वीकार करें तथा पाँचों दिव्य दिशाएँ आपकी सेवा करें ।आप राष्ट्र के श्रेष्ठ पद पर आसीन हों और उग्रवीर होकर हमें योग्यतानुसार ऐश्वर्य प्रदान करें ॥३,४.२॥

अछ त्वा यन्तु हविनः सजाता अग्निर्दूतो अजिरः सं चरातै ।
जायाः पुत्राः सुमनसो भवन्तु बहुं बलिं प्रति पश्यासा उग्रः ॥३,४.३॥

हे तेजस्विन् ! हवन करने वाले या बुलाने वाले सजातीय जन आपके अनुकूल रहें । दूतरूप में अग्निदेव तीव्रता से संचरित हों । स्त्री-बच्चे श्रेष्ठ मन वाले हों ।आप उग्रवीर होकर विभिन्न उपहारों को देखें (प्राप्त करें) ॥३,४.३॥

अश्विना त्वाग्रे मित्रावरुणोभा विश्वे देवा मरुतस्त्वा ह्वयन्तु ।

अधा मनो वसुदेयाय कृणुष्व ततो न उग्रो वि भजा वसूनि ॥३,४.४॥

हे तेजस्विन् ! मित्रावरुण, अश्विनीकुमार, विश्वेदेवा तथा मरुद्गण आपको बुलाएँ। आप अपने मन को धनदान में लगाएँ और प्रचण्डवीर होकर हमको भी यथायोग्य ऐश्वर्य प्रदान करें ॥३,४.४॥

आ प्र द्रव परमस्याः परावतः शिवे ते द्यावापृथिवी उभे स्ताम् ।
तदयं राजा वरुणस्तथाह स त्वायमह्वत्स उपेदमेहि ॥३,४.५॥

हे तेजस्विन् ! आप दूर देश से भी द्रुतगति से यहाँ पधारें । द्यावा-पृथिवी आपके लिए कल्याणकारी हों। राजा वरुण भी आपका आवाहन करते हैं, इसलिए आप आएँ और इसे प्राप्त करें ॥३,४.५॥

इन्द्रेन्द्र मनुष्याः परेहि सं ह्यज्ञास्था वरुणैः संविदानः ।

स त्वायमह्वत्स्वे सधस्थे स देवान् यक्षत्स उ कल्पयद्विशः ॥३,४.६॥

हे शासकों के शासक (इन्द्रदेव) ! आप मनुष्यों के समीप पधारें । वरुणदेव से संयुक्त होकर आप जाने गए हैं। अत: इन प्रत्येक धारणकर्ताओं ने आपको अपने स्थान पर बुलाया है। ऐसे आप, देवताओं का यजन करते हुए प्रज्ञाओं को अपने-अपने कर्तव्य में नियोजित करें ॥३,४.६॥

पथ्या रेवतीर्बहुधा विरूपाः सर्वाः संगत्य वरीयस्ते अक्रन् । तास्त्वा सर्वाः संविदाना ह्वयन्तु दशमीमुग्रः सुमना वशेह ॥३,४.७॥

है तेजस्विन् ! विभूति-सम्पन्न, मार्ग पर (लक्ष्य की ओर) चलने वाली, विविधरूप वाली प्रजाओं ने संयुक्तरूप से आपके लिए यह वरणीय (पद) बनाया है। वह सब आपको एक मत होकर बुलाएँ। आप उग्रवीर एवं श्रेष्ठ मन वाले होकर दसमी (चरमावस्था) को अपने अधीन करें ॥३,४.७॥

सूक्त ५ – राजा और राजकृत सूक्त

ओषधियों की सार रूप पर्णमणि का वर्णन

आयमगन् पर्णमणिर्बली बलेन प्रमृणन्त्सपत्नान् ।
ओजो देवानां पय ओषधीनां वर्चसा मा जिन्वन्त्वप्रयावन् ॥३,५.१॥

यह बलशाली पर्णमणि अपने बल के द्वारा शत्रुओं को विनष्ट करने वाली है । यह देवों का ओजस् तथा औषधियों का साररूप है । यह हमें अपने वर्चस् से पूर्ण कर दे ॥३,५.१॥

मयि क्षत्रं पर्णमणे मयि धारयताद्रयिम् ।
अहं राष्ट्रस्याभीवर्गे निजो भूयासमुत्तमः ॥३,५.२॥

हे पर्णमणे ! आप हमारे अन्दर शक्ति तथा ऐश्वर्य स्थापित करें, जिससे हम राष्ट्र के विशिष्ट वर्ग में उत्तम आत्मीय बन कर रहें ॥३,५.२॥

यं निदधुर्वनस्पतौ गुह्यं देवाः प्रियं मणिम् ।
तमस्मभ्यं सहायुषा देवा ददतु भर्तवे ॥३,५.३॥

जिस गुप्त तथा प्रिय मणि को देवताओं ने वनस्पतियों में स्थापित किया है, उस मणि को देवगण पोषण तथा आयु-संवर्द्धन के लिए हमें प्रदान करें ॥३,५.३॥

सोमस्य पर्णः सह उग्रमागन्न् इन्द्रेण दत्तो वरुणेन शिष्टः ।
तं प्रियासं बहु रोचमानो दीर्घायुत्वाय शतशारदाय ॥३,५.४॥

इन्द्रदेव के द्वारा प्रदत्त तथा वरुणदेव के द्वारा सुसंस्कारित यह सोमपर्णमणि प्रचण्ड बल से सम्पन्न होकर हमें प्राप्त हो । उस तेजस्वी मणि को हम दीर्घायु तथा शतायु की प्राप्ति के लिए प्रिय मानते हैं ॥३,५.४॥

आ मारुक्षत्पर्णमणिर्मह्या अरिष्टतातयह ।
यथाहमुत्तरोऽसान्यर्यम्ण उत संविदः ॥३,५.५॥

यह पर्णमणि चिरकाल तक हमारे समीप रहती हुई हमारे लिए कल्याणकारी हो । म अर्यमादेव की कृपा से इसे धारण करके समान बल वालों से भी महान् बन सकें ॥३,५.५॥

यह धीवानो रथकाराः कर्मारा यह मनीषिणः ।
उपस्तीन् पर्ण मह्यं त्वं सर्वान् कृण्वभितो जनान् ॥३,५.६॥

हे पर्णमणे ! धीवर, रथ बनाने वाले, लौह कर्म करने वाले, जो मनीषी हैं, उन सबको हमारे चारों तरफ परिचर्या के लिए आप उपस्थित करें ॥३,५.६॥

यह राजानो राजकृतः सूता ग्रामण्यश्च यह ।
उपस्तीन् पर्ण मह्यं त्वं सर्वान् कृण्वभितो जनान् ॥३,५.७॥

हे मणे ! जो विभिन्न देशों के राजा और राजाओं का अभिषेक करने वाले हैं तथा जो सूत और ग्राम के नायक हैं, उन सभी को आप हमारे चारों ओर उपस्थित करें ॥३,५.७॥

पर्णोऽसि तनूपानः सयोनिर्वीरो वीरेण मया ।
संवत्सरस्य तेजसा तेन बध्नामि त्वा मणे ॥३,५.८॥

सोमपर्ण से उद्‌भूत हे मणे ! आप शरीर-रक्षक हैं। आप वीर हैं, हमारे समान -जन्मा हैं। आप सविता के तेज से परिपूर्ण हैं, इसलिए आपका तेज ग्रहण करने के लिए हम आपको धारण करते हैं ॥३,५.८॥

सूक्त ६- शत्रुनाशन सूक्त

अश्वत्थ मणि की स्तुति

पुमान् पुंसः परिजातोऽश्वत्थः खदिरादधि ।
स हन्तु शत्रून् मामकान् यान् अहं द्वेष्मि यह च माम्
॥३,६.१॥

वीर्यवान् (पराक्रमी) से वीर्यवान् की उत्पत्ति होती है। उसी प्रकार खदिर (खैर वृक्ष या आकाश से आपूर्ति करने वाले चक्र) के अन्दर स्थापित अश्वत्थ (पीपल अथवा विश्ववृक्ष) उत्पन्न हुआ है । वह अश्वत्थ (तेजस्वी) उन शत्रुओं (विकारों) को नष्ट करे, जो हमसे द्वेष करते हैं तथा हम जिनसे द्वेष करते हैं ॥३,६.१॥

तान् अश्वत्थ निः शृणीहि शत्रून् वैबाधदोधतः ।
इन्द्रेण वृत्रघ्ना मेदी मित्रेण वरुणेन च ॥३,६.२॥

हे अश्वत्थ ! (अश्व के समान स्थित दिव्य जीवन तत्त्व) आप विविध बाधाएँ उत्पन्न करने वाले उन द्रोहियों को नष्ट करें । (इस प्रयोजन के लिए आप) वृत्रहन्ता इन्द्र, मित्र तथा वरुणदेवों के स्नेही बनकर रहें ॥३,६.२॥

यथाश्वत्थ निरभनोऽन्तर्महत्यर्णवे ।
एवा तान्त्सर्वान् निर्भङ्ग्धि यान् अहं द्वेष्मि यह च माम् ॥३,६.३॥

हे अश्वत्थ ! जिस प्रकार आप अर्णव (अन्तरिक्ष) को भेदकर उत्पन्न हुए हैं, उसी प्रकार आप हमारे उन शत्रुओं को पूर्णरूप से विनष्ट करें, जिनसे हम विद्वेष करते हैं तथा जो हमसे विद्वेष करते हैं ॥३,६.३॥

यः सहमानश्चरसि सासहान इव ऋषभः ।
तेनाश्वत्थ त्वया वयं सपत्नान्त्सहिषीमहि ॥३,६.४॥

हे अश्वत्थ ! जिस प्रकार आप शत्रु को रौंदने वाले वृष के सदृश बढ़ते हैं, उसी प्रकार आपके सहयोग से हम मनुष्य अपने शत्रुओं को विनष्ट करने में समर्थ हों ॥३,६.४॥

सिनात्वेनान् निर्ऋतिर्मृत्योः पाशैरमोक्यैः ।
अश्वत्थ शत्रून् मामकान् यान् अहं द्वेष्मि यह च माम् ॥३,६.५॥

हे अश्वत्थ ! निति (विपत्ति) देव हमारे उन शत्रुओं को न टूटने वाले मृत्यु पाश से बाँधे, जिनसे हम विद्वेष करते हैं तथा जो हमसे विद्वेष करते हैं ॥३,६.५॥

यथाश्वत्थ वानस्पत्यान् आरोहन् कृणुषेऽधरान् ।
एवा मे शत्रोर्मूर्धानं विष्वग्भिन्द्धि सहस्व च ॥३,६.६॥

हे अश्वत्थ ! जिस प्रकार आप ऊपर स्थित होकर वनस्पतियों को नीचे स्थापित करते हैं, उसी प्रकार आप

हमारे शत्रुओं के सिर को सब तरफ से विदीर्ण करके, उन्हें विनष्ट कर डालें ॥६॥

तेऽधराञ्चः प्र प्लवन्तां छिन्ना नौरिव बन्धनात्।
न वैबाधप्रणुत्तानां पुनरस्ति निवर्तनम् ॥३,६.७॥

जिस प्रकार नौका-बन्धन छूट जाने पर नदी की धारा में नीचे की ओर प्रवाहित होती है, उसी प्रकार हमारे शत्रु नदी की धारा में ही बह जाएँ। विविध बाधाएँ उत्पन्न करने वालों के लिए पुन: लौटना सम्भव न हो ॥३,६.७॥

प्रैणान् नुदे मनसा प्र चित्तेनोत ब्रह्मणा ।
प्रैणान् वृक्षस्य शाखयाश्वत्थस्य नुदामहे ॥३,६.८॥

हम इन शत्रुओं (विकारों) को ब्रह्मज्ञान के द्वारा मन और चित्त से दूर हटाते हैं। उन्हें हम अश्वत्थ (जीवन-वृक्ष) की शाखाओं (प्राणधाराओं) द्वारा दूर करते हैं ॥३,६.८॥

सूक्त ७- यक्ष्मनाशन सूक्त

हिरण के सिर में सींग की रोग निवारक ओषधि का वर्णन

हरिणस्य रघुष्यदोऽधि शीर्षणि भेषजम् ।
स क्षेत्रियं विषाणया विषूचीनमनीनशत्॥३,७.१॥

द्रुतगति से दौड़ने वाले हरिण (हिरण या सूर्य) के शीर्ष (सर्वोच्च भाग) में रोगों को नष्ट करने वाली औषधि है। वह अपने विषाण (सींग अथवा विशेष प्रभाव) से क्षेत्रिय रोगों को विनष्ट कर देता है ॥३,७.१॥

अनु त्वा हरिणो वृषा पद्भिश्चतुर्भिरक्रमीत्।
विषाणे वि ष्य गुष्पितं यदस्य क्षेत्रियं हृदि ॥३,७.२॥

यह बलशाली हरिण (हिरण या सूर्य) अपने चारों पदों (चरणों) से तुम्हारे अनुकूल होकर आक्रमण करता है । हे

विषाण ! आप इसके (पीड़ित व्यक्ति के हृदय में स्थित गुप्त क्षेत्रिय रोगों को विनष्ट करें ॥३,७.२॥

अदो यदवरोचते चतुष्पक्षमिव छदिः ।
तेना ते सर्वं क्षेत्रियमङ्गेभ्यो नाशयामसि ॥३,७.३॥

, यह जो चार पक्ष (कोनों या विशेषताओं) से युक्त छत की भाँति (हिरण का चर्म अथवा आकाश) सुशोभित हो रहा है, उसके द्वारा हम आपके अंगों से समस्त क्षेत्रिय रोगों को विनष्ट करते हैं ॥३,७.३॥

अमू यह दिवि सुभगे विचृतौ नाम तारके ।
वि क्षेत्रियस्य मुञ्चतामधमं पाशमुत्तमम् ॥३,७.४॥

अन्तरिक्ष में स्थित विवृत (मूल नक्षत्र या प्रकाशित) नामक जो सौभाग्यशाली तारे हैं, वह समस्त क्षेत्रिय रोगों को शरीर के ऊपर तथा नीचे के अंगों से पृथक् करें ॥३,७.४॥

आप इद्वा उ भेषजीरापो अमीवचातनीः ।
आपो विश्वस्य भेषजीस्तास्त्वा मुञ्चन्तु क्षेत्रियात्॥३,७.५॥

जल समस्त रोगों की औषधि है । स्नान-पान आदि के द्वारा यह जल ही औषधि रूप में सभी रोगों को दूर करता है । जो अन्य औषधियों की भाँति किसी एक रोग की नहीं, वरन् समस्त रोगों की औषधि है, हे रोगिन् ! ऐसे जल से तुम्हारे सभी रोग दूर हों ॥३,७.५॥

यदासुतेः क्रियमानायाः क्षेत्रियं त्वा व्यानशे ।
वेदाहं तस्य भेषजं क्षेत्रियं नाशयामि त्वत्॥३,७.६॥

हे रोगिन् ! बिगड़े हुए स्रवित रस से आपके अन्दर जो क्षेत्रिय रोग संव्याप्त हो गया है, उसकी औषधि को हम जानते हैं। उसके द्वारा हम आपके क्षेत्रिय रोग को विनष्ट करते हैं ॥३,७.६॥

अपवासे नक्षत्राणामपवास उषसामुत ।
अपास्मत्सर्वं दुर्भूतमप क्षेत्रियमुछतु ॥३,७.७॥

नक्षत्रों के दूर होने पर उषाकाल में तथा उषा के चले जाने पर दिन में समस्त अनिष्ट हमसे दूर हों। क्षेत्रिय रोगादि भी इसी क्रम में दूर हो जाएँ ॥३,७.७॥

॥अथर्ववेद – तृतीय काण्डम्॥

सूक्त ८- राष्ट्रधारण सूक्त

मित्र, सविता, त्वष्टा, इंद्र, सोम, सविता आदि देवों की स्तुति और आवाहन

आ यातु मित्र ऋतुभिः कल्पमानः संवेशयन् पृथिवीमुस्रियाभिः ।
अथास्मभ्यं वरुणो वायुरग्निर्बृहद्राष्ट्रं संवेश्यं दधातु ॥३,८.१॥

मित्रदेव अपनी रश्मियों के द्वारा पृथ्वी को संव्याप्त करते हुए ऋतुओं के द्वारा हमें दीर्घजीवी बनाने में सक्षम होकर पधारें। इसके बाद वरुणदेव, वायुदेव तथा अग्निदेव हमारे लिए शान्तिदायक बृहत् राष्ट्रको सुस्थिर करें ॥३,८.१॥

धाता रातिः सवितेदं जुशन्तामिन्द्रस्त्वष्टा प्रति हर्यन्तु मे वचः।
हुवे देवीमदितिं शूरपुत्रां सजातानां मध्यमेष्ठा यथासानि ॥३,८.२॥

सबके धारणकर्ता धातादेव, दानशील अर्यमादेव तथा सर्वप्रेरक सवितादेव हमारी आहुतियों को स्वीकार करें । इन्द्रदेव तथा त्वष्टादेव हमारी स्तुतियों को सुनें । शूरपुत्रों की माता देवी अदिति का हम आवाहन करते हैं, जिससे सजातियों के बीच में हम सम्माननीय बन सकें ॥३,८.२॥

हुवे सोमं सवितारं नमोभिर्विश्वान् आदित्यामहमुत्तरत्वे ।
अयमग्निर्दीदायद्दीर्घमेव सजातैरिद्धोऽप्रतिब्रुवद्भिः ॥३,८.३॥

प्रयोग करने वाले याजक को अत्यधिक श्रेष्ठता दिलाने के लिए हम सोमदेव, सवितादेव तथा समस्त आदित्यों को नमनपूर्वक आहूत करते हैं । वियों के आधारभूत अग्निदेव प्रज्वलित हों, जिससे सजातियों के द्वारा हम चिरकाल तक वृद्धि को प्राप्त करते रहें ॥३,८.३॥

इहेदसाथ न परो गमाथेर्यो गोपाः पुष्टपतिर्व आजत्।
अस्मै कामायोप कामिनीर्विश्वे वो देवा उपसंयन्तु ॥३,८.४॥

हे शरीर या राष्ट्र में रहने वाली प्रजाओ-शक्तियो ! आप यहीं रहें, दूर न जाएँ । अन्न या विद्याओं से युक्त गौ (गाय, पृथ्वी अथवा इन्द्रियों) के रक्षक, पुष्टि प्रदाता आपको लाएँ । कामनायुक्त आप प्रज्ञाओं को इस कामना की पूर्ति के लिए विश्वेदेव, एक साथ संयुक्त करें ॥३,८.४॥

सं वो मनांसि सं व्रता समाकूतीर्नमामसि ।
अमी यह विव्रता स्थन तान् वः सं नमयामसि ॥३,८.५॥

(हे मनुष्यो !) हम आपके विचारों, कर्मों तथा संकल्पों को एक भाव से संयुक्त करते हैं। पहले आप जों विपरीत कर्म करते थे, उन सबको हम श्रेष्ठ विचारों के माध्यम से अनुकूल करते हैं ॥३,८.५॥

अहं गृभ्णामि मनसा मनांसि मम चित्तमनु चित्तेभिरेत ।
मम वशेषु हृदयानि वः कृणोमि मम यातमनुवर्त्मान एत ॥३,८.६॥

हम अपने मन में आपके मन को धारण (एक रूप) करते हैं। आप भी हमारे चित्त के अनुकूल अपने चित्त को बनाकर पधारें । आपके हृदयों को हम अपने वश में करते हैं। आप हमारे अनुकूल चलने वाले होकर पधारें ॥३,८.६॥

॥अथर्ववेद – तृतीय काण्डम्॥

सूक्त ९- दुःखनाशन सूक्त

पशुओं से सुरक्षा के लिए देवों से प्रार्थना

कर्शफस्य विशफस्य द्यौः पिता पृथिवी माता ।
यथाभिचक्र देवास्तथाप कृणुता पुनः ॥३,९.१॥

कृशफ (निर्बल अथवा कृश खुरों-नाखूनों वाले) प्राणी, विशफ (बिना खुर वाले, रेंगने वाले, अथवा विशेष खुरों वाले) प्राणियों का पालन-पोषण करने वाले माता- पिता पृथ्वी तथा द्यौ हैं । हे देवताओ ! जिस प्रकार आपने इन विघ्न-बाधाओं के कारणों को हमारे सामने प्रस्तुत किया है, उसी प्रकार इन बाधाओं को हमसे दूर करें ॥३,९.१॥

अश्रेष्माणो अधारयन् तथा तन् मनुना कृतम् ।
कृणोमि वध्रि विष्कन्धं मुष्काबर्हो गवामिव ॥३,९.२॥

न थकने वाले ही इस (मणि या रोग निरोधक शक्ति) को धारण करते हैं। मनु ने भी ऐसा ही किया था । हम विष्कंध आदि रोगों को उसी प्रकार निर्बल करते हैं, जैसे बैलों को बधिया बनाने वाले उन्हें काबू में करते हैं ॥३,९.२॥

पिशङ्गे सूत्रे खृगलं तदा बध्नन्ति वेधसः ।
श्रवस्युं शुष्मं काबवं वध्रिं कृण्वन्तु बन्धुरः ॥३,९.३॥

पिंगल (रंग वाले अथवा दृढ़) सूत्र से उस खृगल (मणि अथवा दुर्धर्ष) को हम बाँधते हैं। इस प्रकार बाँधने वाले लोग प्रबल, शोषक रोग को निर्बल बनाएँ ॥३,९.३॥

यहना श्रवस्यवश्चरथ देवा इवासुरमायया ।
शुनां कपिरिव दूषणो बन्धुरा काबवस्य च ॥३,९.४॥

है यशस्वियों ! आप जिस प्रबल माया के द्वारा देवों की तरह आचरण करते हैं, उसी प्रकार बन्धन वाले (मणि बाँधने वाले

अथवा अनुशासनबद्ध) व्यक्ति दूषणों (दोषों) और रोगों से मुक्त रहते हैं, जैसे बन्दर कुत्तों से मुक्त रहते हैं ॥३,९.४॥

दुष्ट्यै हि त्वा भत्स्यामि दूषयिष्यामि काबवम् ।
उदाशवो रथा इव शपथेभिः सरिष्यथ ॥३,९.५॥

हे मणि या रोगनाशक शक्ति ! दूसरों के द्वारा उपस्थित किए गए विघ्नों को असफल करने के लिए हम आपको धारण करते हैं। आपके द्वारा हम विघ्नों का निवारण करते हैं। (हे मनुष्यो !) द्रुतगामी रथों के समान आप विघ्नों से दूर होकर अपने कार्य में जुट जाएँ ॥३,९.५॥

एकशतं विष्कन्धानि विष्ठिता पृथिवीमनु ।
तेषां त्वामग्रे उज्जहरुर्मणिं विष्कन्धदूषणम् ॥३,९.६॥

धरती पर एक सौ एक प्रकार के विघ्न विद्यमान हैं । हे मणे ! उन विघ्नों के शमन के लिए देवताओं ने आपको ऊँचा उठाया (विशिष्ट पद दिया) है ॥३,९.६॥

॥अथर्ववेद – तृतीय काण्डम्॥

सूक्त १० – रायस्पोषप्राप्ति सूक्त

एकाष्टका उषा की स्तुति

प्रथमा ह व्युवास सा धेनुरभवद्यमे ।
सा नः पयस्वती दुहामुत्तरामुत्तरां समाम् ॥३,१०.१॥

जो (एकाष्टका) प्रथम ही उदित हुई, वह नियमित स्वभाव वाली धेनु (गाय के समान धारण-पोषण करने वाली) सिद्ध हुई । वह पथ-प्रवाहित करने वाली (दिव्य धेनु) हमारे निमित्त उत्तरोत्तर पथ-प्रदायक बनी रहे ॥३,१०.१॥

यां देवाः प्रतिनन्दन्ति रात्रिं धेनुमुपायतीम् ।
संवत्सरस्य या पत्नी सा नो अस्तु सुमङ्गली ॥३,१०.२॥

आने वाली (एकाष्टका से सम्बन्धित) जिस रात्रि रूपी गौ को देखकर देवतागण आनन्दित होते हैं तथा जो संवत्सर रूप

काल (समय) की पत्नी है, वह हमारे लिए श्रेष्ठ मंगलकारी हो ॥३,१०.२॥

संवत्सरस्य प्रतिमां यां त्वा रात्र्युपास्महे ।
सा न आयुष्मतीं प्रजां रायस्पोषेण सं सृज ॥३,१०.३॥

हे रात्रे ! हम आपको संवत्सर की प्रतिमा मानकर आपकी उपासना करते हैं। आप हमारी सन्तानों को दीर्घायु प्रदान करें तथा हमें गवादि धन से संयुक्त करें ॥३,१०.३॥

इयमेव सा या प्रथमा व्यौछदास्वितरासु चरति प्रविष्टा ।
महान्तो अस्यां महिमानो अन्तर्वधूर्जिगाय नवगज्जनित्री ॥३,१०.४॥

यह (एकाष्टका) वही है, जो सृष्टि के प्रारम्भ में उत्पन्न हुई और (समय के) अन्य घटकों में समाहित होकर चलती है । इसके अन्दर अनेक महानताएँ है ।वह नववधू की तरह प्रजननशील तथा जयशील होकर चलती है ॥३,१०.४॥

वानस्पत्या ग्रावाणो घोषमक्रत हविष्कृण्वन्तः परिवत्सरीणम् ।
एकाष्टके सुप्रजसः सुवीरा वयं स्याम पतयो रयीणाम् ॥३,१०.५॥

संवत्सर में चलने वाले यज्ञ के लिए हवि तैयार करने के क्रम में वनस्पतियाँ तथा ग्रावा (पत्थर) ध्वनि कर रहे हैं। हे एकाष्टके !आपके अनुग्रह से हम श्रेष्ठ सन्तानों तथा वीरों से संयुक्त होकर प्रचुर धन के स्वामी हों ॥३,१०.५॥

इडायास्पदं घृतवत्सरीसृपं जातवेदः प्रति हव्या गृभाय ।
यह ग्राम्याः पशवो विश्वरूपास्तेषां सप्तानां मयि रन्तिरस्तु ॥३,१०.६॥

भूमि पर गतिशील हे जातवेदा अग्निदेव ! आप हमारी गौ-घृतयुक्त आहुतियों को ग्रहण करके हर्षित हों । जो ग्राम (समूहों में रहने वाले नाना रूप वाले पशु हैं, उन (गौ, अश्व, भेड़, बकरी, पुरुष, गधा, ऊँट आदि) सातों प्रकार के प्राणियों का हमारे प्रति स्नेह बना रहे ॥३,१०.६॥

आ मा पुष्टे च पोषे च रात्रि देवानां सुमतौ स्याम ।
पूर्णा दर्वे परा पत सुपूर्णा पुनरा पत ।
सर्वान् यज्ञान्त्संभुञ्जतीषमूर्जं न आ भर ॥३,१०.७॥

हे रात्रे ! आप हमें ऐश्वर्य तथा पुत्र-पौत्र आदि से परिपूर्ण करें । आपकी अनुकम्पा से हमारे प्रति देवताओं की सुमति (कल्याणकारी बुद्धि) बनी रहे । यज्ञ के साधनरूप हे दर्वि ! आप आहुतियों से सम्पन्न होकर देवों को प्राप्त हों । आप हमें इच्छित फल प्रदान करती हुई हमारे समीप पधारें । उसके बाद आहुतियों से तृप्ति को प्राप्त करके हमें अन्न और बल प्रदान करें ॥३,१०.७॥

आयमगन्त्संवत्सरः पतिरेकाष्टके तव ।
सा न आयुष्मतीं प्रजां रायस्पोषेण सं सृज ॥३,१०.८॥

यह संवत्सर आपका पति बनकर यहाँ आया है। आप हमारी आयुष्मती सन्तानों को ऐश्वर्य से सम्पन्न करें ॥३,१०.८॥

ऋतून् यज ऋतुपतीन् आर्तवान् उत हायनान् ।
समाः संवत्सरान् मासान् भूतस्य पतयह यजे ॥३,१०.९॥

हम ऋतुओं और उनके अधिष्ठाता देवताओं का हवि द्वारा पूजन करते हैं। संवत्सर के अंग रूप दिन-रात्रि का हम वि द्वारा यजन करते हैं । ऋतु के अवयव-कला, काष्ठा, चौबीस पक्षों, संवत्सर के बारह महीनों तथा प्राणियों के स्वामी काल का हवि द्वारा यजन करते हैं ॥३,१०.९॥

ऋतुभ्यष्ट्वार्तवेभ्यो माद्भ्यः संवत्सरेभ्यः ।
धात्रे विधात्रे समृधे भूतस्य पतयह यजे ॥३,१०.१०॥

हे एकाष्टके ! माह, ऋतु, ऋतु से सम्बन्धित रात-दिन और वर्ष धाता, विधाता तथा समृद्ध-देवता और जगत् के स्वामी की प्रसन्नता के लिए हम आपका यजन करते हैं ॥३,१०.१०॥

इडया जुह्वतो वयं देवान् घृतवता यजे ।
गृहान् अलुभ्यतो वयं सं विशेमोप गोमतः ॥३,१०.११॥

हम गो-घृत से युक्त हवियों के द्वारा समस्त देवताओं का यजन करते हैं। उन देवताओं की अनुकम्पा से हम असीम गौओं से युक्त घरों को ग्रहण करते हुए समस्त कामनाओं की पूर्ति का लाभ प्राप्त कर सकें ॥३,१०.११॥

एकाष्टका तपसा तप्यमाना जजान गर्भं महिमानमिन्द्रम् ।
तेन देवा व्यसहन्त शत्रून् हन्ता दस्यूनामभवच्छचीपतिः ॥३,१०.१२॥

इस एकाष्टको ने तप के द्वारा स्वयं को तपाकर महिमावान् इन्द्रदेव को प्रकट किया। उन इन्द्रदेव की सामर्थ्य से देवों ने असुरों को जीता; क्योंकि वह शचीपति इन्द्रदेव शत्रुओं को विनष्ट करने वाले हैं ॥३,१०.१२॥

इन्द्रपुत्रे सोमपुत्रे दुहितासि प्रजापतेः ।
कामान् अस्माकं पूरय प्रति गृह्णाहि नो हविः ॥३,१०.१३॥

हे एकाष्टके ! हे इन्द्र जैसे पुत्र वाली ! हे सोम जैसे पुत्र वाली ! आप प्रजापति की पुत्री हैं। आप हमारी आहुतियों को ग्रहण करके हमारी अभिलाषाओं को पूर्ण करें ॥३,१०.१३॥

॥अथर्ववेद – तृतीय काण्डम्॥

सूक्त ११ – दीर्घायुप्राप्ति सूक्त

इंद्र और अग्नि देव से यक्ष्मा रोग से मुक्ति की प्रार्थना

मुञ्चामि त्वा हविषा जीवनाय कमज्ञातयक्ष्मादुत राजयक्ष्मात्।
ग्राहिर्जग्राह यद्येतदेनं तस्या इन्द्राग्नी प्र मुमुक्तमेनम् ॥३,११.१॥

हे रोगिन् ! तुम्हारे शरीर में प्रविष्ट यक्ष्मा (रोग), राजयक्ष्मा (राज रोगों से मैं हवियों के द्वारा तुम्हें मुक्त करता हूँ । हे इन्द्रदेव और अग्निदेव ! पीड़ा से जकड़ लेने वाली इस व्याधि से रोगों को मुक्त कराएँ ॥३,११.१॥

यदि क्षितायुर्यदि वा परेतो यदि मृत्योरन्तिकमेव ।
तमा हरामि निर्ऋतेरुपस्थादस्पार्शमेनं शतशारदाय ॥३,११.२॥

यह रोगग्रस्त पुरुष यदि मृत्यु को प्राप्त होने वाला हो या उसकी आयु क्षीण हो गई हो, तो भी मैं विनाश के समीप से वापस लाता हूँ। इसे सौ वर्ष की पूर्ण आयु तक के लिए सुरक्षित करता हूँ ॥३,११.२॥

सहस्राक्षेण शतवीर्येण शतायुषा हविषाहार्षमेनम् ।
इन्द्रो यथैनं शरदो नयात्यति विश्वस्य दुरितस्य पारम् ॥३,११.३॥

सहस्र नेत्र तथा शतवीर्य एवं शतायुयुक्त हविष्य से मैंने इसे (आरोग्य को) उभारा है, ताकि यह संसार के सभी दुरितों (पापों-दुष्कर्मों) से पार हो सके। इन्द्रदेव इसे सौ वर्ष से भी अधिक आयु प्रदान करें ॥३,११.३॥

शतं जीव शरदो वर्धमानः शतं हेमन्तान् छतमु वसन्तान् ।
शतं ते इन्द्रो अग्निः सविता बृहस्पतिः शतायुषा हविषाहार्षमेनम् ॥३,११.४॥

(हे प्राणी !) दीर्घायुष्य प्रदान करने वाली इस हवि के प्रभाव से मैं तुम्हें (नीरोग स्थिति में) वापस लाया हूँ । अब तुम

निरन्तर वृद्धि करते हुए सौ वसन्त ऋतुओं, सौ हेमन्त ऋतुओं तथा सौ शरद ऋतुओं तक जीवित रहो। सर्वप्रेरक सवितादेव, इन्द्रदेव अग्निदेव और बृहस्पतिदेव तुम्हें शतायु प्रदान करें ॥३,११.४॥

प्र विशतं प्राणापानावनड्वाहाविव व्रजम् ।
व्यन्ये यन्तु मृत्यवो यान् आहुरितरान् छतम् ॥३,११.५॥

हे प्राण और अपान !जैसे भार वहन करने वाले बैल अपने गोष्ठ में प्रवेश करते हैं, वैसे आप क्षयग्रस्त रोगी के शरीर में प्रवेश करें । मनुष्यगण मृत्यु के कारणरूप जिन सैकड़ों रोगों का वर्णन करते हैं, वह सभी दूर हो जाएँ ॥३,११.५॥

इहैव स्तं प्राणापानौ माप गातमितो युवम् ।
शरीरमस्याङ्गानि जरसे वहतं पुनः ॥३,११.६॥

हे प्राण और अपान ! आप दोनों इस शरीर में विद्यमान रहें। आप अकाल में भी इस शरीर का त्याग न करें। इस रोगी के शरीर तथा उसके अवयवों को वृद्धावस्था तक धारण करें ॥३,११.६॥

जरायै त्वा परि ददामि जरायै नि धुवामि त्वा ।
जरा त्वा भद्रा नेष्ट व्यन्ये यन्तु मृत्यवो यान् आहुरितरान्
छतम् ॥३,११.७॥

(हे मनुष्य !) हम आपको वृद्धावस्था तक जीवित रहने योग्य बनाते हैं और वृद्धावस्था तक रोगों से आपकी सुरक्षा करते हैं । वृद्धावस्था आपके लिए कल्याणकारी हो । ज्ञानी मनुष्य मृत्यु के कारण रूप जिन रोगों के विषय में कहते हैं, वह समस्त रोग आप से दूर हो जाएँ ॥३,११.७॥

अभि त्वा जरिमाहित गामुक्षणमिव रज्ज्वा ।
यस्त्वा मृत्युरभ्यधत्त जायमानं सुपाशया ।
तं ते सत्यस्य हस्ताभ्यामुदमुञ्चद्बृहस्पतिः ॥३,११.८॥

जैसे गौ या बैल को रस्सी द्वारा बाँधा जाता है, वैसे वृद्धावस्था ने आपको बाँध लिया है ।जिस मृत्यु ने आपको पैदा होते ही अपने पाश द्वारा बाँध रखा है, उस पाश को बृहस्पतिदेव ब्रह्मा के अनुग्रह से मुक्त कराएँ ॥३,११.८॥

॥अथर्ववेद – तृतीय काण्डम्॥

सूक्त १२ – शालानिर्माण सूक्त

शाला, वास्तोष्पति का वर्णन इंद्र और बहस्पति से शाला के निर्माण का निवेदन

इहैव ध्रुवां नि मिनोमि शालां क्षेमे तिष्ठाति घृतमुक्षमाणा ।
तां त्वा शाले सर्ववीराः सुवीरा अरिष्टवीरा उप सं चरेम ॥३,१२.१॥

हम इसी स्थान पर सुदृढ़ शाला को बनाते हैं। वह शाला घृतादि (सार तत्वों) का चिन्तन करती हुई, हमारे कल्याण के लिए स्थित रहे । हे शाले ! हम सब वीर आपके चारों ओर अनिष्टों से मुक्त होकर तथा श्रेष्ठ सन्तानों से सम्पन्न होकर विद्यमान रहें ॥३,१२.१॥

इहैव ध्रुवा प्रति तिष्ठ शालेऽश्वावती गोमती सूनृतावती ।

ऊर्जस्वती घृतवती पयस्वत्युच्छ्रयस्व महते सौभगाय ॥३,१२.२॥

आप यहाँ अश्ववती (घोड़ों या शक्ति से युक्त), गोमती (गौओं अथवा पोषण-सामर्थ्यों से युक्त) तथा श्रेष्ठ वाणी (अभिव्यक्ति से युक्त होकर दृढ़तापूर्वक रहें । ऊर्जा या अन्नयुक्त, घृतयुक्त तथा पयोयुक्त (सभी पोषक तत्वों से युक्त होकर महान् सौभाग्य प्रदान करने के लिए उन्नत स्थान पर स्थिर रहें ॥३,१२.२॥

धरुण्यसि शाले बृहछन्दाः पूतिधान्या ।
आ त्वा वत्सो गमेदा कुमार आ धेनवः सायमास्पन्दमानाः ॥३,१२.३॥

हे शाले !आप भोग-साधनों से सम्पन्न तथा विशाल छत वाली हैं ।आप पवित्र धान्यों के अक्षय भण्डार वाली हैं। आपके अन्दर बच्चे तथा बछड़े आएँ और दूध देने वाली गौएँ भी सायंकाल कूदती हुई पधारें ॥३,१२.३॥

इमां शालां सविता वायुरिन्द्रो बृहस्पतिर्नि मिनोतु प्रजानन् । उक्षन्तूद्ना मरुतो घृतेन भगो नो राजा नि कृषिं तनोतु ॥३,१२.४॥

निर्माण करने की विधि को जानने वाले सवितादेव, वायुदेव, इन्द्रदेव तथा बृहस्पतिदेव इस शाला को विनिर्मित करें । मरुद्गण भी जल तथा घृत के द्वारा इसका सिंचन करें। इसके बाद भगदेवता इसे कृषि आदि क्रियाओं द्वारा सुव्यवस्थित बनाएँ ॥३,१२.४॥

मानस्य पत्नि शरणा स्योना देवी देवेभिर्निमितास्यग्रे । तृणं वसाना सुमना असस्त्वमथास्मभ्यं सहवीरं रयिं दाः ॥३,१२.५॥

सम्माननीय (वास्तुपति) की पत्नी रूप हे शाले ! आप धान्यों का पालन करने वाली हैं। सृष्टि के प्रारम्भ में प्राणियों को हर्ष प्रदान करने, उनकी सुरक्षा करने तथा उनके उपभोग के लिए देवताओं ने आपका सृजन किया है । आप तृणों के

वस्त्रवाली, श्रेष्ठ मनवाली हैं। आप हमें पुत्रों से युक्त ऐश्वर्य प्रदान करें ॥३,१२.५॥

ऋतेन स्थूणामधि रोह वंशोग्रो विराजन्न् अप वृङ्क्ष्व शत्रून्।
मा ते रिषन्न् उपसत्तारो गृहाणां शाले शतं जीवेम शरदः सर्ववीराः ॥३,१२.६॥

हे वंश (बाँस) ! आप अबाध्य रूप से शाला के बीच स्तम्भ रूप में स्थिर रहें और उग्र बनकर प्रकाशित होते हुए(विकारों) रिषुओं को दूर करें । हे शाले ! आपके अन्दर निवास करने वाले हिंसित न हों और इच्छित सन्तानों से सम्पन्न होकर शतायु को प्राप्त करें ॥३,१२.६॥

एमां कुमारस्तरुण आ वत्सो जगता सह ।
एमां परिस्रुतः कुम्भ आ दध्नः कलशैरगुः ॥३,१२.७॥

इस शाला में तरुण बालक और गमनशील गौओं के साथ उनके बछड़े आएँ । इसमें मधुर रस से परिपूर्ण घड़े और दधि से भरे हुए कलश भी आएँ ॥३,१२.७॥

पूर्णं नारि प्र भर कुम्भमेतं घृतस्य धाराममृतेन संभृताम् ।
इमां पातॄन् अमृतेन समङ्ग्धीष्टापूर्तमभि रक्षात्येनाम् ॥३,१२.८॥

हे स्त्री (नारी अथवा प्रकृति) !आप इस घट को अमृतोपम मधुर रस तथा घृत धारा से भली प्रकार भरें । पीने वालों को अमृत से तृप्त करें ।इष्टापूर्त (इष्ट आवश्यकताओं की आपूर्ति) इस शाला को सुरक्षित रखती है ॥३,१२.८॥

इमा आपः प्र भराम्ययक्ष्मा यक्ष्मनाशनीः ।
गृहान् उप प्र सीदाम्यमृतेन सहाग्निना ॥३,१२.९॥

हम स्वयं रोगरहित तथा रोगविनाशक जल को अनश्वर अग्निदेव के साथ घर में स्थित करते हैं ॥३,१२.९॥

सूक्त १३- आपो देवता सूक्त

सिंधु और जल का वर्णन

यददः संप्रयतीरहावनदता हते ।
तस्मादा नद्यो नाम स्थ ता वो नामानि सिन्धवः ॥३,१३.१॥

हे सरिताओ ! आप भली प्रकार से सदैव गतिशील रहने वाली हैं। मेघों के ताड़ित होने (बरसने के बाद आप जो (कल-कल ध्वनि) नाद कर रही हैं, इसलिए आपका नाम 'नदी' पड़ा।वह नाम आपके अनुरूप ही है ॥३,१३.१॥

यत्प्रेषिता वरुणेनाच्छीभं समवल्गत ।
तदाप्नोदिन्द्रो वो यतीस्तस्मादापो अनु ष्ठन ॥३,१३.२॥

जब आप वरुणदेव द्वारा प्रेरित होकर शीघ्र ही मिलकर नाचती हुई सी चलने लगीं, तब इन्द्रदेव ने आपको प्राप्त

किया। इसी 'आप्नोत् क्रिया के कारण आप का नाम आपः' पड़ा ॥३,१३.२॥

अपकामं स्यन्दमाना अवीवरत वो हि कम् ।
इन्द्रो वः शक्तिभिर्देवीस्तस्माद्वार्नाम वो हितम् ॥३,१३.३॥

आप बिना इच्छा के सदैव प्रवाहित होने वाले हैं। इन्द्रदेव ने अपने बल के द्वारा आप का वरण किया । इसीलिए हे देवनशील जल ! आपका नाम 'वारि' पड़ा ॥३,१३.३॥

एकः वो देवोऽप्यतिष्ठत्स्यन्दमाना यथावशम् ।
उदानिषुर्महीरिति तस्मादुदकमुच्यते ॥३,१३.४॥

हे यथेच्छ (आवश्यकतानुसार) बहने वाले (जल तत्त्व) ! एक(श्रेष्ठ)देवता आपके अधिष्ठाता हुए। (देव संयोग से) महान् ऊर्ध्वश्वास (ऊर्ध्वगति) के कारण आपका नाम 'उदक' हुआ ॥३,१३.४॥

आपो भद्रा घृतमिदाप आसन्न् अग्नीषोमौ बिभ्रत्याप इत्ताः ।
तीव्रो रसो मधुपृचामरंगम आ मा प्राणेन सह वर्चसा गमेत्॥३,१३.५॥

(निश्चित रूप से) जल कल्याणकारी हैं, घृत (तेज प्रदायक) है । उसे अग्नि और सोम पुष्ट करते हैं । वह जल, मधुरता से पूर्ण तथा तृप्तिदायक तीव्र रस हमें प्राण तथा वर्चस् के साथ प्राप्त हो ॥३,१३.५॥

आदित्पश्याम्युत वा शृणोम्या मा घोषो गछति वाङ्मासाम् ।
मन्ये भेजानो अमृतस्य तर्हि हिरण्यवर्णा अतृपं यदा वः ॥३,१३.६॥

निश्चित रूप से मैं अनुभव करता हूँ कि उनके द्वारा उच्चरित शब्द हमारे कानों के समीप आ रहे हैं । चमकीले रंग वाले हे जल ! आप का सेवन करने के बाद, अमृतोपम भोजन के समान हमें तृप्ति का अनुभव हुआ ॥३,१३.६॥

इदं व आपो हृदयमयं वत्स ऋतावरीः ।
इहेत्थमेत शक्वरीर्यत्रेदं वेशयामि वः ॥३,१३.७॥

हे जलप्रवाहो ! यह (तुष्टिदायक प्रभाव) आपका हृदय है । हे ऋत प्रवाहीं धाराओ ! यह (त) आपका पुत्र है । हे शक्ति

प्रदायक धाराओ ! यहाँ इस प्रकार आओ, जहाँ तुम्हारे अन्दर ईन (विशेषताओं) को प्रविष्ट करूं ॥३,१३.७॥

॥अथर्ववेद – तृतीय काण्डम्॥

सूक्त १४- गोष्ठ सूक्त

गायों का वंश बढ़ाने के लिए स्तुति

सं वो गोष्ठेन सुषदा सं रय्या सं सुभूत्या ।
अहर्जातस्य यन् नाम तेना वः सं सृजामसि ॥३,१४.१॥

हे गौओ ! हम आपको सुखपूर्वक बैठने योग्य गोशाला प्रदान करते हैं। हम आपको जल, समृद्धि तथा सन्तानों से सम्पन्न करते हैं ॥३,१४.१॥

सं वः सृजत्वर्यमा सं पूषा सं बृहस्पतिः ।
समिन्द्रो यो धनंजयो मयि पुष्यत यद्वसु ॥३,१४.२॥

हे गौओ !अर्यमा, पूषा और बृहस्पतिदेव आपको उत्पन्न करें तथा शत्रुओं का धन जीतने वाले इन्द्रदेव भी आपको उत्पन्न

करें ।आपके पास क्षीर, घृत आदि के रूप में जो ऐश्वर्य है, उससे हम साधकों को पुष्टि प्रदान करें ॥३,१४.२॥

संजग्माना अबिभ्युषीरस्मिन् गोष्ठे करीषिणीः ।
बिभ्रतीः सोम्यं मध्वनमीवा उपेतन ॥३,१४.३॥

हे गौओ ! आप हमारी इस गोशाला में निर्भय होकर तथा पुत्र-पौत्रों से सम्पन्न होकर चिरकाल तक जीवित रहें । आप गोबर पैदा करती हुई तथा नीरोग रहकर मधुर और सौम्य दुग्ध धारण करती हुई हमारे पास पधारें ॥३,१४.३॥

इहैव गाव एतनेहो शकेव पुष्यत ।
इहैवोत प्र जायध्वं मयि संज्ञानमस्तु वः ॥३,१४.४॥

हे गौओ ! आप हमारे ही गोष्ठ में आएँ । जिस प्रकार मक्खी कम समय में ही अनेक गुना विस्तार कर लेती है, उसी प्रकार आप भी वंश वृद्धि को प्राप्त हों। आप इस गोशाला

में बछड़ों से सम्पन्न होकर हम साधकों से प्रेम करें । हमें छोड़कर कभी न जाएँ ॥३,१४.४॥

शिवो वो गोष्ठो भवतु शारिशाकेव पुष्यत ।
इहैवोत प्र जायध्वं मया वः सं सृजामसि ॥३,१४.५॥

हे गौओ !आपकी गोशाला आपके लिए कल्याणकारी हो, 'शारिशाक' (प्राणि- विशेष) के सदृश परिवार का असीमित विस्तार करके समृद्ध हों तथा यहाँ पर रहकर पुत्र-पौत्रादि उत्पन्न करें हम आपका सृजन करते हैं ॥३,१४.५॥

मया गावो गोपतिना सचध्वमयं वो गोष्ठ इह पोषयिष्णुः ।
रायस्पोषेण बहुला भवन्तीर्जीवा जीवन्तीरुप वः सदेम ॥३,१४.६॥

हे गौओं ! आप मुझ गोपति के साथ एकत्रित रहें । यह गोशाला आपका पोषण करें । बहुत (संख्या वाली) होती हुई आप चिरकाल तक जीवित रहें । आपके साथ हम भी दीर्घ आयु को प्राप्त करें ॥३,१४.६॥

सूक्त १५- वाणिज्य सूक्त

व्यापार से लाभ की कामना के लिए इंद्र व अग्नि देव की स्तुति

इन्द्रमहं वणिजं चोदयामि स न ऐतु पुरएता नो अस्तु ।
नुदन्न् अरातिं परिपन्थिनं मृगं स ईशानो धनदा अस्तु मह्यम्
॥३,१५.१॥

हम व्यवसाय में कुशल इन्द्रदेव को प्रेरित करते हैं, वह हमारे पास पधारें, हमारे अग्रणी बने । वह हमारे जीवन-पथ के अवरोध को सताने वाले व्यक्तियों-भूचरों को विनष्ट करते हुए हमें ऐश्वर्य प्रदान करने वाले हों ॥३,१५.१॥

यह पन्थानो बहवो देवयाना अन्तरा द्यावापृथिवी संचरन्ति।
ते मा जुषन्तां पयसा घृतेन यथा क्रीत्वा धनमाहराणि
॥३,१५.२॥

द्यावा-पृथिवी के बीच जो देवों के अनुरूप मार्ग हैं, वह सभी हमें घृत और दुग्ध से तृप्त करें । जिन्हें खरीदकर हम (जीवन व्यवसाय के द्वारा प्रचुर धन-ऐश्वर्य प्राप्त कर सकें ॥३,१५.२॥

इध्मेनाग्न इछमानो घृतेन जुहोमि हव्यं तरसे बलाय ।
यावदीशे ब्रह्मणा वन्दमान इमां धियं शतसेयाय देवीम्
॥३,१५.३॥

है इन्द्राग्ने ! संकट से बचने तथा बल प्राप्ति की कामना से हम ईंधन एवं घृत सहित आपको हव्य प्रदान करते हैं । (यह आहुतियाँ तब तक देंगे जब तक कि ब्रह्म द्वारा प्रदत्त दिव्य बुद्धि की वन्दना करते हुए हम सैकड़ों सिद्धियों पर अधिकार प्राप्त न कर लें ॥३,१५.३॥

इमामग्ने शरणिं मीमृषो नो यमध्वानमगाम दूरम् ।

शुनं नो अस्तु प्रपणो विक्रयश्च प्रतिपणः फलिनं मा कृणोतु ।
इदं हव्यं संविदानौ जुषेथां शुनं नो अस्तु चरितमुत्थितं च ॥३,१५.४॥

हे अग्निदेव ! हमसे हुई त्रुटियों के लिए आप हमें क्षमा करें । हम जिस मार्ग- सुदूर पथ पर आ गए हैं, वहाँ वस्तुओं का क्रय-विक्रय हमारे लिए शुभ हो । हूमारा हर व्यवहार हमें लाभ देने वाला हो। आप हमारे द्वारा समर्पित हवियों को स्वीकार करें । आपकी कृपा से हमारी आचरण उन्नति और सुख देने वाला हो ॥३,१५.४॥

यहन धनेन प्रपणं चरामि धनेन देवा धनमिछमानः ।
तन् मे भूयो भवतु मा कनीयोऽग्ने सातघ्नो देवान् हविषा नि षेध ॥३,१५.५॥

हे देवगणो ! आप लाभ के अवरोधक देवों को इस आहुति से संतुष्ट करके लौटा दें । हे देवताओं ! लाभ की कामना

करते हुए हम जिस धन से व्यापार करते हैं, आपकी कृपा से हमारा वह धन कम न हो, बढ़ता ही रहे ॥३,१५.५॥

यहन धनेन प्रपणं चरामि धनेन देवा धनमिछमानः ।
तस्मिन् म इन्द्रो रुचिमा दधातु प्रजापतिः सविता सोमो अग्निः ॥३,१५.६॥

धन से धन प्राप्त करने की कामना करते हुए, हम जिस धन से व्यापार करना चाहते हैं, उसमें इन्द्रदेव, सवितादेव, प्रजापतिदेव, सोमदेव तथा अग्निदेव हमारी रुचि पैदा करें ॥३,१५.६॥

उप त्वा नमसा वयं होतर्वैश्वानर स्तुमः ।
स नः प्रजास्वात्मसु गोषु प्राणेषु जागृहि ॥३,१५.७॥

हे होता-वैश्वानर अग्निदेव ! हम हवि समर्पित करते हुए आपकी प्रार्थना करते हैं। आप हमारी आत्मा, प्राण, तथा गौओं की सुरक्षा के लिए जागरूक रहें ॥३,१५.७॥

विश्वाहा ते सदमिद्भरेमाश्वायहव तिष्ठते जातवेदः ।
रायस्पोषेण समिषा मदन्तो मा ते अग्ने प्रतिवेशा रिषाम ॥३,१५.८॥

हे जातवेदा अग्ने ! जैसे अपने स्थान पर बँधे हुए घोड़े को अन्न प्रदान करते हैं, वैसे हम आपको प्रतिदिन हवि प्रदान करते हैं आपके सम्पर्क में रहते हुए तथा सेवा करते हुए हम धन-धान्य से समृद्ध रहें, कभी नष्ट न हों॥ ॥३,१५.८॥

॥अथर्ववेद – तृतीय काण्डम्॥

सूक्त १६- कल्याणार्थप्रार्थना सूक्त

अग्नि, इंद्र, मित्र, वरुण आदि की प्रशंसा

प्रातरग्निं प्रातरिन्द्रं हवामहे प्रातर्मित्रावरुणा प्रातरश्विना ।
प्रातर्भगं पूषणं ब्रह्मणस्पतिं प्रातः सोममुत रुद्रं हवामहे
॥३,१६.१॥

प्रभातकाल (यज्ञार्थी) हम अग्निदेव का आवाहन करते हैं। प्रभात में ही यज्ञ की सफलता के निमित्त इन्द्रदेव, मित्रावरुण, अश्विनीकुमारों, भग, पूषा, ब्रह्मणस्पति, सोम और रुद्रदेव का भी आवाहन करते हैं ॥३,१६.१॥

प्रातर्जितं भगमुग्रं हवामहे वयं पुत्रमदितेर्यो विधर्ता ।
आध्रश्चिद्यं मन्यमानस्तुरश्चिद्राजा चिद्यं भगं भक्षीत्याह
॥३,१६.२॥

हम उन भग देवता का आवाहन करते हैं, जो जगत् को धारण करने वाले, उग्रवीर एवं विजयशील हैं। वह अदिति पुत्र हैं, जिनकी स्तुति करने से दरिद्र भी धनवान् हो जाता है। राजा भी उनसे धन की याचना करते हैं ॥३,१६.२॥

भग प्रणेतर्भग सत्यराधो भगेमां धियमुदवा ददन् नः ।
भग प्र णो जनय गोभिरश्वैर्भग प्र नृभिर्नृवन्तः स्याम ॥३,१६.३॥

हे भगदेव ! आप वास्तविक धन हैं । शाश्वत-सत्य ही धन है । हे भगदेव ! आप हमारी स्तुति से प्रसन्न होकर इच्छित धन प्रदान करें । हे देव ! हमें गौएँ, घोड़े, पुत्रादि प्रदान कर श्रेष्ठ मानवों के समाज वाला बनाएँ ॥३,१६.३॥

उतेदानीं भगवन्तः स्यामोत प्रपित्व उत मध्ये अह्नाम् ।
उतोदितौ मघवन्त्सूर्यस्य वयं देवानां सुमतौ स्याम ॥३,१६.४॥

हे देव ! आपकी कृपा से हम भाग्यवान् बनें । दिन के प्रारम्भ और मध्य में भी हम भाग्यवान् रहें । हे धनवान् भग देवता ! हम सूर्योदय के समय समस्त देवताओं का अनुग्रह प्राप्त करें ॥३,१६.४॥

भग एव भगवामस्तु देवस्तेना वयं भगवन्तः स्याम ।
तं त्वा भग सर्व इज्जोहवीमि स नो भग पुरएता भवेह ॥३,१६.५॥

भगदेव ही समृद्ध हों, उनके द्वारा हम ऐश्वर्ययुक्त बने । हे भगदेव ! ऐसे आपको हम सब प्रकार बार-बार भजते हैं, आप हमारे अग्रणी बनें ॥३,१६.५॥

समध्वरायोषसो नमन्त दधिक्रावेव शुचयह पदाय ।
अर्वाचीनं वसुविदं भगं मे रथमिवाश्वा वाजिन आ वहन्तु ॥३,१६.६॥

उषाएँ यज्ञार्थ भली प्रकार उन्मुख हों । जैसे अश्व रथ को लाते हैं, उसी प्रकार वह हमें पवित्र पद प्रदान करने के लिए

दधिक्रा (धारण करके चलने वाले) की तरह नवीन शक्तिशाली, धनज्ञ भग को हमारे लिए ले आएँ ॥३,१६.६॥

अश्वावतीर्गोमतीर्न उषासो वीरवतीः सदमुछन्तु भद्राः ।
घृतं दुहाना विश्वतः प्रपीता यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥३,१६.७॥

समस्त गुणों से युक्त अश्वों, गौओं, वीरों से युक्त एवं घृत का सिंचन करने वाली कल्याणकारी उषाएँ हमारे घरों को प्रकाशित करें । आप सदैव हमारा पालन करते हुए कल्याण करें ॥३,१६.७॥

सूक्त १७- कृषि सूक्त

खेती बढ़ाने के लिए इंद्र, सूर्य, वायु आदि देवों की प्रशंसा

सीरा युञ्जन्ति कवयो युगा वि तन्वते पृथक्।
धीरा देवेषु सुम्नयौ ॥३,१७.१॥

कवि (दूरदर्शी), धीर पुरुष (कृषि के लिए) देवों की प्रसन्नता के लिए हलों को जोतते (नियोजित करते) हैं तथा युगों (जुओं या जोड़ों) को विशेष रूप से विस्तारित करते हैं ॥३,१७.१॥

युनक्त सीरा वि युगा तनोत कृते योनौ वपतेह बीजम् ।
विराजः श्नुष्टिः सभरा असन् नो नेदीय इत्सृण्यः पक्वमा यवन्
॥३,१७.२॥

(हे कृषको !) हलों को प्रयुक्त करो, युगों को फैलाओ। इस प्रकार तैयार उत्पादक क्षेत्र में बीजों का वपन करो। हमारे लिए भरपूर उपज हो ।वे परिपक्व होकर काटने वाले उपकरणों के माध्यम से हमारे निकट आएँ ॥३,१७.२॥

लाङ्गलं पवीरवत्सुशीमं सोमसत्सरु ।
उदिद्वपतु गामविं प्रस्थावद्रथवाहनं पीबरीं च प्रफर्व्यम् ॥३,१७.३॥

श्रेष्ठ फाल से युक्त (अथवा वज्र की तरह कठोर), सुगमता से चलने वाला, सोम (अन्न या दिव्य सोम) की प्रक्रिया को गुप्त रीति से सम्पादित करने वाला हल(हमें) पुष्ट 'गौ' (गाय, भूमि या इन्द्रियाँ), 'अवि' (भेड़ या रक्षण सामर्थ्य), शीघ्र चलने वाले रथवाहन तथा नारी (अथवा चेतन शक्ति) प्रदान करे ॥३,१७.३॥

इन्द्रः सीतां नि गृह्णातु तां पूषाभि रक्षतु ।
सा नः पयस्वती दुहामुत्तरामुत्तरां समाम् ॥३,१७.४॥

इन्द्रदेव कृषि योग्य भूमि को सँभालें । पूषादेव उसकी देख-भाल करें, तब वह (धरित्री) श्रेष्ठ धान्य तथा जल से परिपूर्ण होकर हमारे लिए धान्य आदि का दोहन करे ॥३,१७.४॥

शुनं सुफाला वि तुदन्तु भूमिं शुनं कीनाशा अनु यन्तु वाहान् ।
शुनासीरा हविषा तोशमाना सुपिप्पला ओषधीः कर्तमस्मै ॥३,१७.५॥

हल के नीचे लगी हुई, लोहे से विनिर्मित श्रेष्ठ'फालें खेत को भली-प्रकार से जोतें और किसान लोग बैलों के पीछे-पीछे आराम से जाएँ। हे वायु और सूर्य देवो ! आप दोनों हविष्य से प्रसन्न होकर, पृथ्वी को जल से सींचकर इन औषधियों को श्रेष्ठ फलों से युक्त करें ॥३,१७.५॥

शुनं वाहाः शुनं नरः शुनं कृषतु लाङ्गलम् ।
शुनं वरत्रा बध्यन्तां शुनमष्ट्रामुदिङ्गय ॥३,१७.६॥

कृषक हर्षित होकर खेत को जोते, बैल उन्हें सुख प्रदान करें और हल सुखपूर्वक कृषि कार्य सम्पन्न करें । रस्सियाँ सुखपूर्वक बाँधे । हे शुन: देवता ! आप चाबुक को सुख के लिए ही चलाएँ ॥३,१७.६॥

शुनासीरेह स्म मे जुषेथाम् ।
यद्दिवि चक्रथुः पयस्तेनेमामुप सिञ्चतम् ॥३,१७.७॥

हे वायु और सूर्यदेव ! आप हमारी हवि का सेवन करें। आकाश में निवास करने वाले जल देवता वर्षा के द्वारा इस भूमि को सिंचित करें ॥३,१७.७॥

सीते वन्दामहे त्वार्वाची सुभगे भव ।
यथा नः सुमना असो यथा नः सुफला भुवः ॥३,१७.८॥

हे सीते (जुती हुई भूमि) ! हम आपको प्रणाम करते हैं। हे ऐश्वर्यशालिनी भूमि ! आप हमारे लिए श्रेष्ठ मन वाली तथा श्रेष्ठ फल प्रदान करने वाली होकर हमारे अनुकूल रहें ॥३,१७.८॥

घृतेन सीता मधुना समक्ता विश्वैर्देवैरनुमता मरुद्भिः ।
सा नः सीते पयसाभ्याववृत्स्वोर्जस्वती घृतवत्पिन्वमाना ॥३,१७.९॥

घृत (जल) और शहद द्वारा भली प्रकार अभिषिंचित हे सीते (जुती भूमिका !आप देवगणों तथा मरुतों द्वारा स्वीकृत होकर घृत से सिंचित होकर (घृतंयुक्त) पोषक रस (जल-दुग्धादि) के साथ हमारी ओर उन्मुख हों ॥३,१७.९॥

॥अथर्ववेद – तृतीय काण्डम्॥

सूक्त १८- वनस्पति सूक्त

पाठा जडीबूटी का वर्णन

इमां खनाम्योषधिं वीरुधां बलवत्तमाम् ।
यया सपत्नीं बाधते यया संविन्दते पतिम् ॥३,१८.१॥

हम इस बलवती औषधि को खोदकर निकालते हैं। इससे सपत्नी (दुर्बुद्धि) को बाधित किया जाता हैं और स्वामी की असाधारण प्रीति उपलब्ध की जाती है ॥३,१८.१॥

उत्तानपर्णे सुभगे देवजूते सहस्वति ।
सपत्नीं मे परा णुद पतिं मे केवलं कृधि ॥३,१८.२॥

हे उत्तानपणी (इस नाम की या ऊर्ध्वमुखी पत्तों वाली), हितकारिणी, देवों द्वारा सेवित, बलवती (औषधे) ! आप मेरी

सौत (अविद्या) को दूर करें । मेरे स्वामी को मात्र मेरे लिए प्रतियुक्त करें ॥३,१८.२॥

नहि ते नाम जग्राह नो अस्मिन् रमसे पतौ ।
परामेव परावतं सपत्नीं गमयामसि ॥३,१८.३॥

हे सपत्नी, मैं तेरा (सपत्नी- दुर्बुद्धि का) नाम नहीं लेती । तू भी पति (परमेश्वर या जीवात्मा) के साथ सुख अनुभव नहीं करती । मैं अपनी सपत्नी को बहुत दूर भेज देना चाहती हूँ ॥३,१८.३॥

उत्तराहमुत्तर उत्तरेदुत्तराभ्यः ।
अधः सपत्नी या ममाधरा साधराभ्यः ॥३,१८.४॥

हे अत्युत्तम औषधे ! मैं श्रेष्ठ हूँ, श्रेष्ठों में भी अति श्रेष्ठ बनूँ । हमारी सपत्नी (अविद्या) अधम है, वह अधम से अधम गति पायह ॥३,१८.४॥

अहमस्मि सहमानाथो त्वमसि सासहिः ।

उभे सहस्वती भूत्वा सपत्नीं मे सहावहै ॥३,१८.५॥

हे औषधे ! मैं आपके सहयोग से सपत्नी को पराजित करने वाली हूँ। आप भी इस कार्य में समर्थ हैं । हम दोनों शनि सम्पन्न बनकर सपत्नी को शक्तिहीन करें ॥३,१८.५॥

अभि तेऽधां सहमानामुप तेऽधां सहीयसीम् ।
मामनु प्र ते मनो वत्सं गौरिव धावतु पथा वारिव धावतु ॥३,१८.६॥

(हे पतिदेव !) मैं आपके समीप, आपके चारों ओर इस विजयदायिनी औषधि को स्थापित करती हैं। इस औषधि के प्रभाव से आपकी मन हमारी ओर उसी प्रकार आकर्षित हो, जैसे गोएँ बछड़े की ओर दौड़ती हैं तथा जल नीचे की ओर प्रवाहित होता है ॥३,१८.६॥

सूक्त १९- अजरक्षत्र सूक्त

पुरोहित द्वारा राजा की जय की कामना

संशितं म इदं ब्रह्म संशितं वीर्यं बलम् ।
संशितं क्षत्रमजरमस्तु जिष्णुर्येषामस्मि पुरोहितः ॥३,१९.१॥

(पुरोहित की कामना है) हमारा ब्राह्मणत्व तीक्ष्ण हो और तब (उच्चारित) यह मंत्र तेजस्वी हो । (मंत्र के प्रभाव से) हमारे बल एवं वीर्य में तेजस्विता आएँ । जिनके हम विजयी पुरोहित हैं, उनका क्षात्रत्व अजर बने ॥३,१९.१॥

समहमेषां राष्ट्रं स्यामि समोजो वीर्यं बलम् ।
वृश्चामि शत्रूणां बाहून् अनेन हविषा अहम् ॥३,१९.२॥

हम आहुतियों द्वारा इस राष्ट्र को तेजस्वी तथा समृद्ध बनाते हैं। हम उनके बल, वीर्य तथा सैन्य शक्ति को भी तेजस्वी

बनाते हैं, उसके शत्रुओं की भुजाओं (सामर्थ्य) का उच्छेदन करते हैं ॥३,१९.२॥

नीचैः पद्यन्तामधरे भवन्तु यह नः सूरिं मघवानं पृतन्यान् ।
क्षिणामि ब्रह्मणामित्रान् उन् नयामि स्वान् अहम् ॥३,१९.३॥

जो हमारे धन-सम्पन्नों तथा विद्वानों पर सैन्य सहित आक्रमण करें, वह शत्रु पतित हो जाएँ- अधोगति पाएँ। हम (मंत्र शक्ति के प्रभाव से) शत्रुओं की सेना को क्षीण करके अपने लोगों को उन्नत बनाते हैं ॥३,१९.३॥

तीक्ष्णीयांसः परशोरग्नेस्तीक्ष्णतरा उत ।
इन्द्रस्य वज्रात्तीक्ष्णीयांसो यहषामस्मि पुरोहितः ॥३,१९.४॥

हम जिनके पुरोहित हैं, वह फरसे से भी अधिक तीक्ष्ण हो जाएँ, अग्नि से भी अधिक तेजस्वी हों । उनके हथियार इन्द्रदेव के वज्र से भी अधिक तीक्ष्ण हों ॥३,१९.४॥

एषामहमायुधा सं स्याम्येषां राष्ट्रं सुवीरं वर्धयामि ।
एषां क्षत्रमजरमस्तु जिष्ण्वेषां चित्तं विश्वेऽवन्तु देवाः ॥३,१९.५॥

हम अपने राष्ट्र को श्रेष्ठ वीरों से सम्पन्न करके समृद्ध करते हैं। इनके शस्त्रों को तेजस्वी बनाते हैं । इनका क्षात्र तेज क्षयरहित तथा विजयशील हो । समस्त देवता इनके चित्त को उत्साहित करें ॥३,१९.५॥

उद्धर्षन्तां मघवन् वाजिनान्युद्वीराणां जयतामेतु घोषः ।
पृथग्घोषा उलुलयः केतुमन्त उदीरताम् ।
देवा इन्द्रज्येष्ठा मरुतो यन्तु सेनया ॥३,१९.६॥

हे ऐश्वर्यवान् इन्द्र हमारे बलशाली दल का उत्साह बढ़े व विजयी वीरों का सिंहनाद हो ।झंडा लेकर आक्रमण करने वाले वीरों का जयघोष चारों ओर फैले । इन्द्रदेव की प्रमुखता में मरुद्गण हमारी सेना के साथ चलें ॥३,१९.६॥

प्रेता जयता नर उग्रा वः सन्तु बाहवः ।
तीक्ष्णेषवोऽबलधन्वनो हतोग्रायुधा अबलान् उग्रबाहवः ॥३,१९.७॥

हे वीरो ! युद्ध भूमि की ओर बढ़ो। तुम्हारी बलिष्ठ भुजाएँ तीक्ष्ण आयुधों से शत्रु सेना पर प्रहार करें। शक्तिशाली आयुधों को धारण करने से बलशाली भुजाओं के द्वारा आप बलहीन आयुधों वाले कमजोर शत्रुओं को नष्ट करें। युद्ध में मरुद्गण आपकी सहायता के लिए साथ रहें । देवों की कृपा से आप युद्ध में विजयी बनें ॥३,१९.७॥

अवसृष्टा परा पत शरव्ये ब्रह्मसंशिते ।
जय अमित्रान् प्र पद्यस्व जह्येषां वरंवरं मामीषां मोचि कश्चन ॥३,१९.८॥

हे बाण ! मंत्रों के प्रयोग से तीक्ष्ण किए हुए आप हमारे धनुष से छोड़े जाने पर शत्रु सेना का विनाश करें । शत्रु सेना में प्रवेश कर उनमें जो श्रेष्ठतम वीर, हाथी, घोड़े आदि हों, उन्हें नष्ट करें । दूर होते हुए भी शत्रुओं का कोई भी वीर शेष न बचे ॥३,१९.८॥

॥अथर्ववेद – तृतीय काण्डम्॥

सूक्त २०- रयिसंवर्धन सूक्त

अग्नि की स्तुति

अयं ते योनिर्ऋत्वियो यतो जातो अरोचथाः ।
तं जानन्न् अग्न आ रोहाधा नो वर्धय रयिम् ॥३,२०.१॥

हे अग्निदेव ! यह अरणि या यज्ञ बेदी आपकी उत्पत्ति का हेतु है, जिसके द्वारा आप प्रकट होकर शोभायमान लेते हैं। अपने उस मूल को जानते हुए आप उस पर प्रतिष्ठित हों और हमारे धन-वैभव को बढ़ाएँ ॥३,२०.१॥

अग्ने अछा वदेह नः प्रत्यङ्नः सुमना भव ।
प्र णो यछ विशां पते धनदा असि नस्त्वम् ॥३,२०.२॥

हे अग्निदेव ! आप हमारे प्रति श्रेष्ठ भावों को रखकर इस यज्ञ में उपस्थित हों तथा हमारे लिए हितकारी उपदेश करें

। हे प्रजापालक अग्निदेव ! आप ऐश्वर्य दाता हैं, इसलिए हमें भी धन-धान्य से परिपूर्ण करें ॥३,२०.२॥

प्र णो यछत्वर्यमा प्र भगः प्र बृहस्पतिः ।
प्र देवीः प्रोत सूनृता रयिं देवी दधातु मे ॥३,२०.३॥

अर्यमा, भग और बृहस्पतिदेव हमें ऐश्वर्य से परिपूर्ण करें । समस्त देवगण तथा वाणी की अधिष्ठात्री, सत्यप्रिय देवी सरस्वती हमें भरपूर सम्पदाएँ प्रदान करें ॥३,२०.३॥

सोमं राजानमवसेऽग्निं गीर्भिर्हवामहे ।
आदित्यं विष्णुं सूर्यं ब्रह्माणं च बृहस्पतिम् ॥३,२०.४॥

हम अपने संरक्षण एवं पालन के लिए राजा सोम, अग्निदेव, आदित्यगण, विष्णुदेव, सूर्यदेव, प्रजापति ब्रह्मा और बृहस्पतिदेव को स्तोत्रों द्वारा आमन्त्रित करते हैं ॥३,२०.४॥

त्वं नो अग्ने अग्निभिर्ब्रह्म यज्ञं वर्धय ।
त्वं नो देव दातवे रयिं दानाय चोदय ॥३,२०.५॥

हे अग्निदेव ! आप अन्य सभी अग्नियों के साथ पधार कर हमारे स्तोत्रों एवं यज्ञ की अभिवृद्धि करें । आप धन-वैभव प्रदान करने के निमित्त यजमानों एवं दाताओं को भी प्रेरित करें ॥३,२०.५॥

इन्द्रवायू उभाविह सुहवेह हवामहे ।
यथा नः सर्व इज्जनः संगत्यां सुमना असद्दानकामश्च नो भुवत्॥३,२०.६॥

प्रशंसनीय इन्द्रदेव एवं वायुदेव ! दोनों को हम इस यज्ञीय कर्म में आदरपूर्वक आमंत्रित करते हैं। सभी देवगण हमारे प्रति अनुकूल विचार रखते हुए हर्षित हों । सभी मनुष्य दान की भावना से अभिप्रेरित हों । अतः हम आपका आवाहन करते हैं ॥३,२०.६॥

अर्यमणं बृहस्पतिमिन्द्रं दानाय चोदय ।
वातं विष्णुं सरस्वतीं सवितारं च वाजिनम् ॥३,२०.७॥

हे स्तोताओ ! आप सब अर्यमा, बृहस्पति, इन्द्र, वायु, विष्णु, सरस्वती, अन्न तथा बलप्रदायक सवितादेव का आवाहन

करें । सभी देव हमें ऐश्वर्य प्रदान करने के लिए पधारें ॥३,२०.७॥

वाजस्य नु प्रसवे सं बभूविमेमा च विश्वा भुवनानि अन्तः ।
उतादित्सन्तं दापयतु प्रजानन् रयिं च नः सर्ववीरं नि यछ ॥३,२०.८॥

अन्न की उत्पत्ति के कारणभूत कर्म को हम शीघ्र ही प्राप्त करें । वृष्टि के द्वारा अन्न पैदा करने वाले 'वाज प्रसव देवता के मध्य में यह समस्त दृश्य-जीव निवास करते हैं । यह कृपण व्यक्ति को दान देने के लिए प्रेरित करें तथा हमें वीर पुत्रों से युक्त महान् ऐश्वर्य प्रदान करें ॥३,२०.८॥

दुह्रां मे पञ्च प्रदिषो दुह्रामुर्वीर्यथाबलम् ।
प्रापेयं सर्वा आकूतीर्मनसा हृदयहन च ॥३,२०.९॥

यह उर्वी (विस्तृत पृथ्वी) तथा पाँचों महा दिशाएँ हमें इच्छित फल प्रदान करें । इनके अनुग्रह से हम अपने मन और अन्तःकरण के समस्त संकल्पों को पूर्ण कर सकें ॥३,२०.९॥

गोसनिं वाचमुदेयं वर्चसा माभ्युदिहि ।
आ रुन्धां सर्वतो वायुस्त्वष्टा पोषं दधातु मे ॥३,२०.१०॥

गौ आदि समस्त प्रकार के ऐश्वर्यों को प्रदान करने वाली वाणी को हम उच्चरित करते हैं । हे वाग्देवता ! आप अपने तेज़ के द्वारा हमें प्रकाशित करें, वायुदेव सभी ओर से आकर हमें आवृत करें तथा त्वष्टा देव हमारे शरीर को पुष्ट करें ॥३,२०.१०॥

॥अथर्ववेद – तृतीय काण्डम्॥

सूक्त २१- शान्ति सूक्त

अग्नि की स्तुति

यह अग्नयो अप्स्वन्तर्ये वृत्रे यह पुरुषे यह अश्मसु ।
य आविवेशोषधीर्यो वनस्पतींस्तेभ्यो अग्निभ्यो हुतमस्त्वेतत्॥३,२१.१॥

जो अग्नियाँ मेघों, मनुष्यों, मणियों (सूर्यकान्त आदि), औषधियों, वृक्ष-वनस्पतियों तथा जल में विद्यमान हैं, उन समस्त अग्नियों को यह हवि प्राप्त हो ॥३,२१.१॥

यः सोमे अन्तर्यो गोष्वन्तर्य आविष्टो वयःसु यो मृगेषु ।
य आविवेश द्विपदो यस्चतुष्पदस्तेभ्यो अग्निभ्यो हुतमस्त्वेतत्॥३,२१.२॥

जो अग्नियाँ सोमलताओं, गौओं, पक्षियों, हरिणों, दो पैर वाले मनुष्यों तथा चार पैर वाले पशुओं के अन्दर विद्यमान हैं, उन समस्त अग्नियों के लिए यह हवि प्राप्त हो ॥३,२१.२॥

य इन्द्रेण सरथं याति देवो वैश्वानर उत विश्वदाव्यः ।
यं जोहवीमि पृतनासु सासहिं तेभ्यो अग्निभ्यो हुतमस्त्वेतत्॥३,२१.३॥

जो अग्निदेव इन्द्र के साथ एक रथ पर आरूढ़ होकर गमन करते हैं; जो सबको जलाने वाले दावाग्नि रूप हैं, जो सबके हितकारी हैं तथा युद्ध में विजय प्रदान करने वाले हैं, उन अग्निदेव को यह आहुतियाँ प्राप्त हों ॥३,२१.३॥

यो देवो विश्वाद्यमु काममाहुर्यं दातारं प्रतिगृह्णन्तमाहुः ।
यो धीरः शक्रः परिभूरदाभ्यस्तेभ्यो अग्निभ्यो हुतमस्त्वेतत्॥३,२१.४॥

जो अग्निदेव समस्त विश्व के भक्षक हैं, जो इच्छित फलदाता के रूप में पुकारे जाते हैं, जिनको देने वाला और ग्रहण करने वाला भी कहा जाता है, जो विवेकवान् , बलवान्,

शत्रुओं को दबाने वाले और स्वयं किसी से न दबने वाले कहलाते हैं, उन अग्निदेव को यह् आहुति प्राप्त हो ॥३,२१.४॥

यं त्वा होतारं मनसाभि संविदुस्त्रयोदश भौवनाः पञ्च मानवाः ।
वर्चोधसे यशसे सूनृतावते तेभ्यो अग्निभ्यो हुतमस्त्वेतत्॥३,२१.५॥

हे अग्ने ! तेरह भौवन (संवत्सर के १३ माह) और पाँच ऋतुएँ (अथवा भुवन ऋषि के विश्वकर्मा आदि १३ पुत्र और पाँचों वर्गों के मनुष्यों आपको मन से यज्ञ-सम्पादक के रूप में जानते हैं । हे वर्चस्वी, सत्यभाषी तथा कीर्तिवान् ! आपको यह हवि प्राप्त हो ॥३,२१.५॥

उक्षान्नाय वशान्नाय सोमपृष्ठाय वेधसे ।
वैश्वानरज्येष्ठेभ्यस्तेभ्यो अग्निभ्यो हुतमस्त्वेतत्॥३,२१.६॥

जो गौओं और बैलों के लिए अन्न प्रदान करते हैं और जो अपने ऊपर सोम आदि औषधियों को धारण करते हैं, उन

विद्वान् तथा समस्त मनुष्यों के लिए कल्याणकारी महान् अग्निदेव के लिए यह हवि प्राप्त हो ॥३,२१.६॥

दिवं पृथिवीमन्वन्तरिक्षं यह विद्युतमनुसंचरन्ति ।
यह दिक्ष्वन्तर्ये वाते अन्तस्तेभ्यो अग्निभ्यो हुतमस्त्वेतत्॥३,२१.७॥

जो अग्नियाँ द्युलोक, पृथ्वीलोक और अन्तरिक्षलोक में व्याप्त हैं, जो विद्युत् के रूप में सर्वत्र विचरण करतीं हैं, जो सभी दिशाओं और वायु के अन्दर प्रविष्ट होकर विचरण करती हैं, उन अग्नियों को यह हवि प्राप्त हो ॥३,२१.७॥

हिरण्यपाणिं सवितारमिन्द्रं बृहस्पतिं वरुणं मित्रमग्निम् ।
विश्वान् देवान् अङ्गिरसो हवामहे इमं क्रव्यादं शमयन्त्वग्निम् ॥३,२१.८॥

स्तोताओं के ऊपर अनुदानों की वर्षा करने वाले, (हिरण्यपाणि) स्वर्णिम किरणों वाले, सर्व प्रेरक सवितादेव, इन्द्रदेव, मित्रावरुणदेव, अग्निदेव तथा विश्वेदेवों का हम अंङ्गिरावंशी ऋषि आवाहन करते हैं, वह समस्त देवगण

इस 'क्रव्याद अग्नि' (मांस भक्षी अग्नि अथवा क्षीण करने वाली दुष्प्रवृत्ति) को शान्त करें ॥३,२१.८॥

शान्तो अग्निः क्रव्याच्छान्तः पुरुषरेषणः ।
अथो यो विश्वदाव्यस्तं क्रव्यादमशीशमम् ॥३,२१.९॥

देवताओं की कृपा से मांस का भक्षण करने वाले क्रव्याद अग्निदेव शान्त हो गए हैं। मनुष्यों की हिंसा करने वाले अग्निदेव भी शान्त हों । सबको जलाने वाले, मांस भोजी अग्निदेव को भी हमने शान्त कर दिया हैं ॥३,२१.९॥

यह पर्वताः सोमपृष्ठा आप उत्तानशीवरीः ।
वातः पर्जन्य आदग्निस्ते क्रव्यादमशीशमन् ॥३,२१.१०॥

जो योग आदि को धारण करने वाले पर्वत हैं, जो ऊपर की ओर गमन करने वाला जल (ऊर्ध्वगामी रस) हैं, वायु और मेघ हैं, उन सभी ने इन मांस-भक्षक अग्निदेव को शान्त कर दिया है ॥३,२१.१०॥

सूक्त २२- वर्चः प्राप्ति सूक्त

इंद्र, वरुण आदि से बल की प्रार्थना

हस्तिवर्चसं प्रथतां बृहद्यशो अदित्या यत्तन्वः संबभूव ।
तत्सर्वे समदुर्मह्यमेतद्विश्वे देवा अदितिः सजोषाः ॥३,२२.१॥

हमें हाथी के समान महान् तेजस् (अजेय शक्ति प्राप्त हो । जो तेजस् देवमाता अदिति के शरीर से उत्पन्न हुआ है, उस तेजस् को समस्त देवगण तथा देवमाता अदिति प्रसन्नतापूर्वक हमें प्रदान करें ॥३,२२.१॥

मित्रश्च वरुणश्चेन्द्रो रुद्रश्च चेततु ।
देवासो विश्वधायसस्ते माञ्जन्तु वर्चसा ॥३,२२.२॥

मित्रावरुण, इन्द्र तथा रुद्रदेव हमें उत्साह प्रदान करें। विश्व को धारण करने वाले सूर्य (इन्द्र) आदि देव अपने तेजस् से हमें सुसमृद्ध करें ॥३,२२.२॥

यहन हस्ती वर्चसा संबभूव यहन राजा मनुष्येस्वप्स्वन्तः ।
यहन देवा देवतामग्र आयन् तेन मामद्य वर्चसाग्रे वर्चस्विनं कृणु ॥३,२२.३॥

जिस तेजस् से हाथी बलवान् होता है। राजा मनुष्यों में तेजस्वी होता है, जलचर प्राणी शक्ति-सम्पन्न होते हैं और जिसके द्वारा देवताओं ने सर्वप्रथम देवत्व प्राप्त किया था, उसी तेजस् के द्वारा आप हमें वर्चस्वी बनाएँ ॥३,२२.३॥

यत्ते वर्चो जातवेदो बृहद्भवत्याहुतेः ।
यावत्सूर्यस्य वर्च आसुरस्य च हस्तिनः ।
तावन् मे अश्विना वर्च आ धत्तां पुष्करस्रजा ॥३,२२.४॥

उत्पन्न प्राणियों को जानने वाले तथा हवियों द्वारा आवाहन किए जाने वाले हे अग्निदेव ! आपके अन्दर तथा सूर्य के अन्दर जो प्रखर तेजस् है, उस तेजस् को कमल पुष्प की

माला धारण करने वाले अश्विनीकुमार, हममें स्थापित करें ॥३,२२.४॥

यावच्चतस्रः प्रदिशश्चक्षुर्यावत्समश्नुते ।
तावत्समैत्विन्द्रियं मयि तद्धस्तिवर्चसम् ॥३,२२.५॥

जितने स्थान को चारों दिशाएँ घेरती हैं और नेत्र नक्षत्र मण्डल के जितने स्थान को देख सकते हैं, परम ऐश्वर्य सम्पन्न इन्द्रदेव का उतना बड़ा चिह्न हमें प्राप्त हो और हाथी के समान वह वर्चस् भी हमें प्राप्त हो ॥३,२२.५॥

हस्ती मृगाणां सुषदामतिष्ठावान् बभूव हि ।
तस्य भगेन वर्चसाभि षिञ्चामि मामहम् ॥३,२२.६॥

जैसे वन में विचरण करने वाले मृग आदि पशुओं में हाथी प्रतिष्ठित होता है, उसी प्रकार श्रेष्ठतम तेजस् और ऐश्वर्य के द्वारा हम अपने आपको अभिषिक्त करते हैं ॥३,२२.६॥

॥अथर्ववेद – तृतीय काण्डम्॥

सूक्त २३- वीरप्रसूति सूक्त

पुत्र प्राप्ति की कामना

यहन वेहद्धभूविथ नाशयामसि तत्त्वत्।
इदं तदन्यत्र त्वदप दूरे नि दध्मसि ॥३,२३.१॥

हे स्त्री ! जिस पाप या पापजन्य रोग के कारण आप वन्ध्या हुई हैं, उस रोग को हम आपसे दूर करते हैं। यह रोग पुनः उत्पन्न न हो, इसलिए इसको हम आपसे दूर फेंकते हैं ॥३,२३.१॥

आ ते योनिं गर्भ एतु पुमान् बाण इवेषुधिम् ।
आ वीरोऽत्र जायतां पुत्रस्ते दशमास्यः ॥३,२३.२॥

हे स्त्री ! जिस प्रकार बाण तूणीर में सहज ही प्रवेश करते हैं, उसी प्रकार पुसत्व से युक्त गर्भ आपके गर्भाशय में स्थापित करते हैं। आपका वह गर्भ दस महीने तक गर्भाशय में रहकर वीर पुत्र के रूप में उत्पन्न हो ॥३,२३.२॥

पुमांसं पुत्रं जनय तं पुमान् अनु जायताम् ।
भवासि पुत्राणां माता जातानां जनयाश्च यान् ॥३,२३.३॥

हे स्त्री ! आप पुरुष लक्षणों से युक्त पुत्र पैदा करें और उसके पीछे भी पुत्र ही पैदा हो। जिन पुत्रों को आपने उत्पन्न किया है तथा जिनको इसके बाद उत्पन्न करेंगी, उन सभी पुत्रों की आप माता हों ॥३,२३.३॥

यानि बद्राणि बीजान्यृषभा जनयन्ति च ।
तैस्त्वं पुत्रं विन्दस्व सा प्रसूर्धेनुका भव ॥३,२३.४॥

हे स्त्री !जिन अमोघ वीर्यों के द्वारा वृषभ गौओं में गर्भ की स्थापना कर बछड़े उत्पन्न करते हैं, वैसे ही अमोघ वीर्यों के द्वारा आप पुत्र प्राप्त करें ।इस प्रकार आप गौ के सदृश

पुत्रों को उत्पन्न करती हुई, अभिवृद्धि को प्राप्त हों॥३,२३.४॥

कृणोमि ते प्राजापत्यमा योनिं गर्भ एतु ते ।
विन्दस्व त्वं पुत्रं नारि यस्तुभ्यं शमसच्छमु तस्मै त्वं भव ॥३,२३.५॥

हे स्त्री ! हम आपके निमित्त प्रजापति द्वारा निर्धारित संस्कार करते हैं। इसके द्वारा आपके गर्भाशय में गर्भ की स्थापना हो । आप ऐसा पुत्र प्राप्त करें, जो आपको सुख प्रदान करे तथा जिसको आप सुख प्रदान करें ॥३,२३.५॥

यासां द्यौः पिता पृथिवी माता समुद्रो मूलं वीरुधां बभूव ।
तास्त्वा पुत्रविद्याय दैवीः प्रावन्त्वोषधयः ॥३,२३.६॥

जिन औषधियों के पिता द्युलोक हैं और माता पृथ्वी हैं तथा जिनकी वृद्धि का मूल कारण समुद्र (जल) है, वह दिव्य औषधियाँ पुत्र लाभ के लिए आपकी विशेष रूप से रक्षा करें ॥३,२३.६॥

सूक्त २४- समृद्धिप्राप्ति सूक्त

वनस्पति की प्रशंसा

पयस्वतीरोषधयः पयस्वन् मामकं वचः ।
अथो पयस्वतीनामा भरेऽहं सहस्रशः ॥३,२४.१॥

समस्त औषधियाँ (धान्य) रस (सारतत्त्व) से परिपूर्ण हों । मेरे वचन (मंत्रादि) भी (मधुर) रस से समन्वित तथा सभी के लिए अहणीय हों। उन सारयुक्त औषधियों (धान्यों) को मैं हजारों प्रकार से प्राप्त करू ॥३,२४.१॥

वेदाहं पयस्वन्तं चकार धान्यं बहु ।
संभृत्वा नाम यो देवस्तं वयं हवामहे योयो अयज्वनो गृहे ॥३,२४.२॥

औषधियों में रस(जीवन सत्व) की स्थापना करने वाले उन देवताओं को हम भली-भाँति जानते हैं, वह धान्यादि को

बढ़ाने वाले हैं। जो अयाज्ञिक (कृपण) मनुष्यों के गृहों में हैं, उन 'संभृत्वा, (इस नाम वाले अथवा बिखरे धन का संचय करने वाले) देवों को हम आवाहित करते हैं ॥३,२४.२॥

इमा याः पञ्च प्रदिशो मानवीः पञ्च कृष्टयः ।
वृष्टे शापं नदीरिवेह स्फातिं समावहान् ॥३,२४.३॥

पूर्व आदि पाँचों दिशाएँ तथा मन से उत्पन्न होने वाले पाँच प्रकार के (वर्षों के) मनुष्य इस स्थान को उसी प्रकार समृद्ध करें, जिस प्रकार वर्षा के जल से उफनती हुई नदियाँ जल को एक स्थान से दूसरे स्थान तक पहुँचा देती हैं ॥३,२४.३॥

उदुत्सं शतधारं सहस्रधारमक्षितम् ।
एवास्माकेदं धान्यं सहस्रधारमक्षितम् ॥३,२४.४॥

जिस प्रकार सैकड़ों-हजारों धाराओं से प्रवाहित होने के बाद भी जल का आदि स्रोत अक्षय बना रहता है, उसी प्रकार हमारा धन-धान्य भी अनेक धाराओं (रूपों) से खर्च होने के बाद भी अक्षय बना रहे ॥३,२४.४॥

तहस्त समाहर सहस्रहस्त सं किर ।

कृतस्य कार्यस्य चेह स्फातिं समावह ॥३,२४.५॥

हे मनुष्यो ! आप सैकड़ों हाथों वाले होकर धन एकत्रित करें तथा हजारों हाथों वाले होकर उसका दान कर दें । इस तरह आप अपने किए हुए तथा किए जाने वाले कर्मों की वृद्धि करें ॥३,२४.५॥

तिस्रो मात्रा गन्धर्वाणां चतस्रो गृहपत्न्याः ।
तासां या स्फातिमत्तमा तया त्वाभि मृशामसि ॥३,२४.६॥

गन्धर्वों की सुख-समृद्धि का मूल आधार जो तीन कलाएँ हैं तथा गन्धर्व-पत्नियों की समृद्धि का आधार जो चार कलाएँ हैं, उनमें सर्वश्रेष्ठ परम समृद्धि प्रदान करने वाली कला से हम धान्य को भली-भाँति सुनियोजित करते हैं । हे धान्य ! कला के प्रभाव से आप वृद्धि को प्राप्त करें ॥३,२४.६॥

उपोहश्च समूहश्च क्षत्तारौ ते प्रजापते ।
ताविहा वहतां स्फातिं बहुं भूमानमक्षितम् ॥३,२४.७॥

हे प्रजापते ! धान्य को समीप लाने वाले उपोह' नामक देव तथा प्राप्त धन की अभिवृद्धि करने वाले समूह नामक देव आपके सारथि हैं । आप उन दोनों देवताओं को अक्षय धन की प्राप्ति के लिए यहाँ बुलाएँ ॥३,२४.७॥

सूक्त २५- कामबाण सूक्त

काम देव, मित्र, वरुण देव की प्रशंसा और स्तुति

उत्तुदस्त्वोत्तुदतु मा धृथाः शयने स्वे ।
इषुः कामस्य या भीमा तया विध्यामि त्वा हृदि ॥३,२५.१॥

हे स्त्री ! उत्कृष्ट होकर भी पीड़ा पहुँचाने वाले 'उत्तुद' (इस नाम वाले अथवा विचलित करने वाले) देव आपको व्यथित करें । तीक्ष्ण कामबाण से हम आपका हृदय बींधते हैं, उससे व्यथित होकर आप अपनी शय्या पर सुख की नींद न प्राप्त कर सकें ॥३,२५.१॥

आधीपर्णां कामशल्यामिषुं संकल्पकुल्मलाम् ।
तां सुसंनतां कृत्वा कामो विध्यतु त्वा हृदि ॥३,२५.२॥

जिस बाण में मानसिक पीड़ारूपी पंख लगे हैं, रमण करने की इच्छा ही जिसका अगला भाग (शल्य) है तथा जिसमें भोग-विषयक संकल्प रूपी दण्ड लगे हैं, उसको धनुष पर चढ़ाकर, कामदेव आपके हृदय का वेधन करें ॥३,२५.२॥

या प्लीहानं शोषयति कामस्येषुः सुसंनता ।
प्राचीनपक्षा व्योषा तया विध्यामि त्वा हृदि ॥३,२५.३॥

हे स्त्री ! कामदेव द्वारा भली प्रकार संधान किया हुआ बाण सरलगामी है । अत्यधिक दाहक, हृदय में प्रवेश करके तिल्ली (प्लीहा) को सुखा देने वाले, उस बाण के द्वारा हम आपके हृदय को विदीर्ण करते हैं ॥३,२५.३॥

शुचा विद्धा व्योषया शुष्कास्याभि सर्प मा ।
मृदुर्निमन्युः केवली प्रियवादिन्यनुव्रता ॥३,२५.४॥

हे स्त्री ! इस दाहक, शोकवर्धक बाण के प्रभाव से म्लान मुख होकर हमारे समीप आएँ । काम जन्य क्रोध को छोड़कर आप मृदु बोलने वाली होकर हमारे अनुकूल कर्म करती हुई हमें प्राप्त हों ॥३,२५.४॥

आजामि त्वाजन्या परि मातुरथो पितुः ।
यथा मम क्रतावसो मम चित्तमुपायसि ॥३,२५.५॥

हे स्त्री ! काम से प्रताड़ित आपको, हम आपके माता-पिता के समीप से लाते हैं, जिससे आप कर्मों और विचारों से हमारे अनुकूल होकर हमें प्राप्त हों ॥३,२५.५॥

व्यस्यै मित्रावरुणौ हृदश्चित्तान्यस्यतम् ।
अथैनामक्रतुं कृत्वा ममैव कृणुतं वशे ॥३,२५.६॥

हे मित्र और वरुण देव ! आप इस स्त्री के हृदय और चित्त को विशेष रूप से प्रभावित करें और (पूर्व अभ्यास) कर्मों को भुलाकर इसे मेरे अनुकूल आचरण वाली बनाएँ ॥३,२५.६॥

सूक्त २६- दिक्षु आत्मरक्षा सूक्त

गंधर्वो की स्तुति

यहऽस्यां स्थ प्राच्यां दिशि हेतयो नाम देवास्तेषां वो अग्निरिषवः ।
ते नो मृडत ते नोऽधि ब्रूत तेभ्यो वो नमस्तेभ्यो वः स्वाहा ॥३,२६.१॥

हे देवो ! आप पूर्व दिशा की ओर 'वज्र' (शत्रुनाशक) नाम से निवास करते हैं। आपके बाण अग्नि के समान तेजस्वी हैं। आप हमारी सुरक्षा करने में समर्थ होकर हमें सुख प्रदान करें । हमारे लिए अपनत्व सूचक शब्दों को उच्चारण करें । हम आपको नमन करते हुए हवि समर्पित करते हैं ॥३,२६.१॥

यहऽस्यां स्थ दक्षिणायां दिश्यविष्यवो नाम देवास्तेषां वः काम इषवः ।
ते नो मृडत ते नोऽधि ब्रूत तेभ्यो वो नमस्तेभ्यो वः स्वाहा ॥३,२६.२॥

हे देवो ! आप दक्षिण दिशा में 'अवस्यव' (रक्षक) नाम से निवास करते हैं। वांछित विषय की इच्छा ही आपके बाण हैं । आप हमें सुख प्रदान करें तथा हमारे लिए अपनत्व सूचक शब्द कहें । आपके लिए हम नमन करते हुए हवि प्रदान करते हैं ॥३,२६.२॥

यहऽस्यां स्थ प्रतीच्यां दिशि वैराजा नाम देवास्तेषां व आप इषवः ।
ते नो मृडत ते नोऽधि ब्रूत तेभ्यो वो नमस्तेभ्यो वः स्वाहा ॥३,२६.३॥

हे देवो ! आप पश्चिम दिशा में 'वैराज' (विशेष क्षमतावान् नाम से निवास करते हैं। वृष्टि का जल ही आपके बाण हैं। आप हमें सुखी करें तथा हमारे लिए अपनत्व सूचक शब्द

कहें । हम आपके लिएनमनपूर्वक हवि प्रदान करते हैं ॥३,२६.३॥

यहऽस्यां स्थोदीच्यां दिशि प्रविध्यन्तो नाम देवास्तेषां वो वात इषवः ।
ते नो मृडत ते नोऽधि ब्रूत तेभ्यो वो नमस्तेभ्यो वः स्वाहा ॥३,२६.४॥

हे देवो ! आप उत्तर दिशा में 'प्रविध्यन्त' (वेध करने वाले) नाम से निवास करते हैं। आपके बाण वायु के सदृश द्रुतगामी हैं । आप हमें सुख प्रदान करें तथा हमारे लिए अपनत्व सूचक शब्द कहें । हम आपको नमन करते हुए हवि प्रदान करते हैं ॥३,२६.४॥

यहऽस्यां स्थ ध्रुवायां दिशि निलिम्पा नाम देवास्तेषां व ओषधीरिषवः ।
ते नो मृडत ते नोऽधि ब्रूत तेभ्यो वो नमस्तेभ्यो वः स्वाहा ॥३,२६.५॥

हे देवो ! आप नीचे की दिशा में निरन्तर निवास करने वाले 'निलिम्पा' (लेप लगाने वाले) नामक देवता हैं । औषधियाँ ही आपके बाण हैं । आप हमें सुख प्रदान करें तथा अपनत्व सूचक उपदेश करें । हम आपके लिए नमन करते हुए हवि प्रदान करते हैं ॥३,२६.५॥

यहऽस्यां स्थोर्ध्वायां दिश्यवस्वन्तो नाम देवास्तेषां वो बृहस्पतिरिषवः ।
ते नो मृडत ते नोऽधि ब्रूत तेभ्यो वो नमस्तेभ्यो वः स्वाहा ॥३,२६.६॥

हे देवो! आप ऊपर की दिशा में सुरक्षा करने वाले 'अवस्वन्त' (रक्षाधिकारी) नाम से निवास करते हैं। बृहस्पतिदेव ही आपके बाण हैं। आप हमें सुख प्रदान करें तथा हमारे लिए अपनत्व सूचक उपदेश करें । हमआपके लिए नमन करते हुए हवि प्रदान करते हैं ॥३,२६.६॥

॥अथर्ववेद – तृतीय काण्डम्॥

सूक्त २७- शत्रुनिवारण सूक्त

दिशाओं की स्तुति

प्राची दिगग्निरधिपतिरसितो रक्षितादित्या इषवः ।
तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु ।
योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः ॥३,२७.१॥

पूर्व दिशा हमारे ऊपर अनुग्रह करने वाली हो । पूर्व दिशा के अधिपति अग्निदेव हैं, रक्षक 'असित (बन्धनरहित) हैं, 'बाण' प्रहारक आदित्य हैं । इन (दिशाओं के) अधिपतियों, रक्षकों तथा बाणों को हमारा नमन हैं । ऐसे सभी (हितैषियों) को हमारा नमन है । जो शत्रु हमसे विद्वेष करते हैं तथा जिनसे हम विद्वेष करते हैं, उन शत्रुओं को हम आपके जबड़े (या दण्ड व्यवस्था) में डालते हैं ॥३,२७.१॥

दक्षिणा दिगिन्द्रोऽधिपतिस्तिरश्चिराजी रक्षिता पितर इषवः ।
तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु ।
योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः ॥३,२७.२॥

दक्षिण दिशा के अधिपति इन्द्रदेव उसके रक्षक 'तिरश्चिराजी' (मर्यादा में रहने वाले) तथा 'बाण' पितृदेव हैं। उन अधिपतियों, रक्षकों तथा बाणों को हमारा नमन है। ऐसे सभी हितैषियों को हमारा नमन है । जो शत्रु हमसे विद्वेष करते हैं तथा जिनसे हम विद्वेष करते हैं, उन शत्रुओं को आपके नियन्त्रण में डालते हैं ॥३,२७.२॥

प्रतीची दिग्वरुणोऽधिपतिः पृदाकू रक्षितान्नमिषवः ।
तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु ।
योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः ॥३,२७.३॥

पश्चिम दिशा के स्वामी वरुणदेव हैं, उनके रक्षक 'पृदाकु' (सर्पादि) हैं तथा अन्न उसके बाण हैं । इन सबको हमारा

नमन हैं । जो शत्रु हमसे विद्वेष करते हैं तथा जिनसे हम विद्वेष करते हैं, उन शत्रुओं को हम आपके जबड़े में डालते हैं ॥३,२७.३॥

उदीची दिक्सोमोऽधिपतिः स्वजो रक्षिताशनिरिषवः ।
तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु ।
योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः ॥३,२७.४॥

उत्तर दिशा के अधिपति सोम हैं और उनके रक्षक 'स्वज' (स्वयं जन्मने वाले हैं तथा अशनि हीं बाण हैं। इन सबको हमारा नमन है । जो शत्रु हमसे विद्वेष करते हैं तथा जिनसे हम विद्वेष करते हैं, उन शत्रुओं को हमआपके नियन्त्रण में डालते हैं ॥३,२७.४॥

ध्रुवा दिग्विष्णुरधिपतिः कल्माषग्रीवो रक्षिता वीरुध इषवः ।
तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु ।
योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः ॥३,२७.५॥

अधो दिशा-(ध्रुव) के स्वामी विष्णु हैं और उनके रक्षक कल्माषग्रीव' (चितकबरे रंग वाले) हैं तथा शत्रु विनाशक औषधियाँ ही बाण हैं। इन सबको हमारा नमन है । यह नमन इन सबको हर्षित करे । जो शत्रु हमसे विद्वेष करते हैं तथा जिनसे हम विद्वेष करते हैं, इन शत्रुओं को हम आपके दण्ड विधान में डालते हैं ॥३,२७.५॥

ऊर्ध्वा दिग्बृहस्पतिरधिपतिः श्वित्रो रक्षिता वर्षमिषवः ।
तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु ।
योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः ॥३,२७.६॥

ऊर्ध्व दिशा के स्वामी बृहस्पतिदेव हैं, उनके रक्षक 'श्वित्र' (पवित्र) हैं तथा वृष्टि जल ही शत्रु विनाशक बाण, है। उन सबको हमारा नमन है । यह नमन उन सबको हर्षित करे । जो शत्रु हमसे विद्वेष करते हैं तथा जिनसे हम विद्वेष

करते हैं, उन शत्रुओं को हम आपके नियन्त्रण में डालते हैं ॥३,२७.६॥

सूक्त २८- पशुपोषण सूक्त

जुड़वां बच्चों को जन्म देने वाली गाय का वर्णन

एकैकयैषा सृष्ट्या सं बभूव यत्र गा असृजन्त भूतकृतो विश्वरूपाः ।
यत्र विजायते यमिन्यपर्तुः सा पशून् क्षिणाति रिफती रुशती ॥३,२८.१॥

जहाँ एक-एक करके सृष्टि बनी, (वहाँ) पदार्थों के सृजेता ने विश्वरूपा (विविध रूपों वाली अथवा विश्वरूपिणी) गौ (पृथ्वी) का सृजन किया। (इस भूतल पर) जहाँ यमनी (नियामक प्रकृति) ऋतुकाल से भिन्न परिणाम उत्पन्न करने लगती है, तो वह पीड़ा उत्पन्न करती, कष्ट देती तथा पशुओं को नष्ट करती हैं ॥३,२८.१॥

एषा पशून्त्सं क्षिणाति क्रव्याद्भूत्वा व्यद्वरी ।

उतैनां ब्रह्मणे दद्यात्तथा स्योना शिवा स्यात्॥३,२८.२॥

ऐसी (यमिनी) मांस भक्षी (क्रूर) होकर पशुओं (प्राणियों) को नष्ट करने लगती है। उसे ब्रह्म या ब्राह्मण को सौंप देना चाहिए, ताकि वह सुख तथा कल्याण देने वाली हो जाए ॥३,२८.२॥

शिवा भव पुरुषेभ्यो गोभ्यो अश्वेभ्यः शिवा ।
शिवास्मै सर्वस्मै क्षेत्राय शिवा न इहैधि ॥३,२८.३॥

है यमिनि ! आप मनुष्यों के लिए सुखदायी हों तथा गौओं और अश्वों के लिए कल्याणकारिणी हों। आप समस्त भूमि के लिए कल्याणकारिणी होकर हमारे लिए भी सुखदायी हों ॥३,२८.३॥

इह पुष्टिरिह रस इह सहस्रसातमा भव ।
पशून् यमिनि पोषय ॥३,२८.४॥

यहाँ (इस क्षेत्र में) पुष्टि और रसों की वृद्धि हो । हे यमिनि ! आप इस क्षेत्र के पशुओं का पोषण करें तथा इसे हजारों प्रकार का धन प्रदान करें ॥३,२८.४॥

यत्रा सुहार्दः सुकृतो मदन्ति विहाय रोगं तन्वः स्वायाः ।
तं लोकं यमिन्यभिसंबभूव सा नो मा हिंसीत्पुरुषान् पशूंश्च
॥३,२८.५॥

जिस देश में श्रेष्ठ हृदयवाले तथा श्रेष्ठ कर्म वाले मनुष्य अपने शरीर के रोगों का परित्याग करके आनन्दित होते हैं, उस देश में यमिनी पुरुषों और पशुओं की हिंसा न करे ॥३,२८.५॥

यत्रा सुहार्दां सुकृतामग्निहोत्रहुतां यत्र लोकः ।
तं लोकं यमिन्यभिसंबभूव सा नो मा हिंसीत्पुरुषान् पशूंश्च
॥३,२८.६॥

जिस देश में श्रेष्ठ हृदय वाले तथा श्रेष्ठ कर्म वाले मनुष्य अग्निहोत्र, हवन आदि में वि प्रदान करने के लिए निरत रहते हैं । उस देश में यमिनी मनुष्यों और पशुओं की हिंसा न करें ॥३,२८.६॥

॥अथर्ववेद – तृतीय काण्डम्॥

सूक्त २९ – अवि सूक्त

सफेद पैरों वाली भेड़ की महत्ता का वर्णन

यद्राजानो विभजन्त इष्टापूर्तस्य षोडशं यमस्यामी सभासदः।
अविस्तस्मात्प्र मुञ्चति दत्तः शितिपात्स्वधा ॥३,२९.१॥

जब राजा यम के नियम पालक सभासद (मनुष्यकृत पाप-पुण्यों का) विभाजन करते हैं, तब (अर्जन के) सोलहवें अंश के रूप में दिया गया इष्टापूर्त रूप शितिपाद् अवि (काले-उजले चरणों वाला रक्षको भय से मुक्तः करता है तथा तुष्टि प्रदान करता है ॥३,२९.१॥

सर्वान् कामान् पूरयत्याभवन् प्रभवन् भवन् ।
आकूतिप्रोऽविर्दत्तः शितिपान्न् नोप दस्यति ॥३,२९.२॥

(इष्टापूर्त का यह) दिया हुआ 'शितिपाद् अवि' (अनिष्ट करने वाली शक्तियों का पतन करने वाला रक्षक) संकल्पों की पूर्ति करने वाला, सत्कर्मों को प्रभावशाली बनाने वाला, सब कामनाओं को पूर्ण करने वाला तथा नष्ट न होने वाला होता है ॥३,२९.२॥

यो ददाति शितिपादमविं लोकेन संमितम् ।
स नाकमभ्यारोहति यत्र शुल्को न क्रियते अबलेन बलीयसे ॥३,२९.३॥

जो (व्यक्ति) इस लोक-सम्मत शितिपाद् अवि (इष्टापूर्त भाग) का दान करता है । वह स्वर्ग को प्राप्त करता है । जहाँ निर्बल से बलपूर्वक शुल्क वसूल नहीं किया जाता ॥३,२९.३॥

पञ्चापूपं शितिपादमविं लोकेन संमितम् ।
प्रदातोप जीवति पितृणां लोकेऽक्षितम् ॥३,२९.४॥

पाँच (तत्त्वों या प्राणों) को सड़न (विकृतियों) से बचाने वाले लोक-सम्मत इस शितिपाद् अवि (इष्टापूर्त भाग) का दान करने वाला व्यक्ति श्रेष्ठ पितृलोकों में अक्षय जीवन प्राप्त करता है ॥३,२९.४॥

पञ्चापूपं शितिपादमविं लोकेन संमितम् ।
प्रदातोप जीवति सूर्यामासयोरक्षितम् ॥३,२९.५॥

पाँचों (तत्त्वों या प्राणों) को सड़न (विकृतियों) से बचाने वाले लोक-सम्मत इस शितिपाद् अवि को दान करने वाला (साधक) सूर्य और चन्द्र के समान अक्षय जीवन प्राप्त करता है ॥३,२९.५॥

इरेव नोप दस्यति समुद्र इव पयो महत्।
देवौ सवासिनाविव शितिपान् नोप दस्यति ॥३,२९.६॥

यह शितिपाद् अवि (अनिष्ट-निवारक, संरक्षक-दान) महान् पृथ्वी और समुद्र के जल के समान तथा साथ रहने वाले

देवों (अश्विनीकुमारों) की भाँति कभी क्षीण नहीं होता ॥३,२९.६॥

क इदं कस्मा अदात्कामः कामायादात्।
कामो दाता कामः प्रतिग्रहीता कामः समुद्रमा विवेश ।
कामेन त्वा प्रति गृह्णामि कामैतत्ते ॥३,२९.७॥

यह (दान) किसने दिया? किसको दिया ? (उत्तर हैं) कामनाओं ने कामनाओं को दिया। मनोरथ ही दाता है तथा मनोरथ ही प्राप्त करने वाला हैं । कामनाओं से ही तुम्हें (दान को) स्वीकार करता हूँ । हे कामनाओ ! यह सब तुम्हारा है ॥३,२९.७॥

भूमिष्ट्वा प्रति गृह्णात्वन्तरिक्षमिदं महत्।
माहं प्राणेन मात्मना मा प्रजया प्रतिगृह्य वि राधिषि ॥३,२९.८॥

(हे श्रेष्ठदान !) यह भूमि और महान् अन्तरिक्ष तुम्हें प्राप्त करें । मैं इसे प्राप्त करके (प्राप्ति के मद से) प्राणों (प्राणशक्ति), आत्मा (आत्मबल) तथा समाज से दूर न हो जाऊँ ॥३,२९.८॥

सूक्त ३०- सांमनस्य सूक्त

सौमनस्य कर्म की विशेषताएं

सहृदयं सांमनस्यमविद्वेषं कृणोमि वः ।
अन्यो अन्यमभि हर्यत वत्सं जातमिवाघ्न्या ॥३,३०.१॥

हे मनुष्यो ! हम आपके लिए हृदय को प्रेमपूर्ण बनाने वाले तथा सौमनस्य बढ़ाने वाले कर्म करते हैं। आप लोग परस्पर उसी प्रकार व्यवहार करें, जिस प्रकार उत्पन्न हुए बछड़े से गाय स्नेह करती है ॥३,३०.१॥

अनुव्रतः पितुः पुत्रो मात्रा भवतु संमनाः ।
जाया पत्ये मधुमतीं वाचं वदतु शन्तिवाम् ॥३,३०.२॥

पुत्र अपने पिता के अनुकूल कर्म करने वाला हो और अपनी माता के साथ समान विचार से रहने वाला हो । पत्नी

अपने पति से मधुरता तथा सुख से युक्त वाणी बोले ॥३,३०.२॥

मा भ्राता भ्रातरं द्विक्षन् मा स्वसारमुत स्वसा ।
सम्यञ्चः सव्रता भूत्वा वाचं वदत भद्रया ॥३,३०.३॥

भाई अपने भाई से विद्वेष न करे और बहन अपनी बहन से विद्वेष न करे । वह सब एक विचार तथा एक कर्म वाले होकर परस्पर कल्याणकारी वार्तालाप करें ॥३,३०.३॥

यहन देवा न वियन्ति नो च विद्विषते मिथः ।
तत्कृण्मो ब्रह्म वो गृहे संज्ञानं पुरुषेभ्यः ॥३,३०.४॥

जिसकी शक्ति से देवगण विपरीत विचार वाले नहीं होते हैं और परस्पर विद्वेष भी नहीं करते हैं, उस समान विचार को सम्पादित करने वाले ज्ञान को हम आपके घर के मनुष्यों के लिए (जाग्रत् या प्रयुक्त) करते हैं ॥३,३०.४॥

ज्यायस्वन्तश्चित्तिनो मा वि यौष्ट संराधयन्तः सधुराश्चरन्तः ।
अन्यो अन्यस्मै वल्गु वदन्त एत सध्रीचीनान् वः संमनसस्कृणोमि ॥३,३०.५॥

आप छोटों-बड़ों का ध्यान रखकर व्यवहार करते हुए, समान विचार रखते हुए तथा समान कार्य करते हुए पृथक् न हों । आप एक दूसरे से प्रेमपूर्वक वार्तालाप करते हुए पधारें । हे मनुष्यो ! हम भी आपके समान कार्यों में प्रवृत्त होते हैं ॥३,३०.५॥

समानी प्रपा सह वोऽन्नभागः समाने योक्त्रे सह वो युनज्मि।
सम्यञ्चोऽग्निं सपर्यतारा नाभिमिवाभितः ॥३,३०.६॥

हे समानता की कामना करने वाले मनुष्यो ! आपके जल पीने के स्थान एक हों तथा अन्न का भाग साथ-साथ हो । हम आपको एक ही प्रेमपाश में साथ-साथ बाँधते हैं। जिस प्रकार पहियों के अरे नाभि के आश्रित होकर रहते हैं, उसी प्रकार आप सब भी एक ही फल की कामना करते हुए अग्निदेव की उपासना करें ॥३,३०.६॥

सध्रीचीनान् वः संमनसस्कृणोम्येकश्नुष्टीन्त्संवननेन सर्वान् ।
देवा इवामृतं रक्षमाणाः सायंप्रातः सौमनसो वो अस्तु ॥३,३०.७॥

हम आपके मन को समान बनाकर एक जैसे कार्य में प्रवृत्त करते हैं और आपको एक जैसा अन्न ग्रहण करने वाला बनाते हैं। इसी कर्म के द्वारा हम आपको वशीभूत करते हैं। अमृत की सुरक्षा करने वाले देवताओं के समान आपके मन प्रात: और सायं हर्षित रहें ॥३,३०.७॥

सूक्त ३१- यक्ष्मनाशन सूक्त

अश्विनीकुमारों, इंद्र, वायु आदि की स्तुति

वि देवा जरसावृतन् वि त्वमग्ने अरात्या ।
व्यहं सर्वेण पाप्मना वि यक्ष्मेण समायुषा ॥३,३१.१॥

देवगण वृद्धावस्था से अप्रभावित रहते हैं। हे अग्निदेव ! आप इसे कृपणता तथा शत्रुता से दूर रखें। हम कष्टदायक पाप से और यक्ष्मा (रोगों) से विमुक्त रहें और दीर्घायुष्य प्राप्त करें ॥३,३१.१॥

व्यार्त्या पवमानो वि शक्रः पापकृत्यया ।
व्यहं सर्वेण पाप्मना वि यक्ष्मेण समायुषा ॥३,३१.२॥

पवमान (पवित्र बने रहने वाले) वायुदेव इसे पीड़ा से मुक्त रखें । समर्थ इन्द्रदेव इसे पापकर्म से पृथक् रखें। हमें कष्टदायक पाप से और यक्ष्मा (रोगों) से मुक्त रहें और दीर्घायुष्य प्राप्त करें ॥३,३१.२॥

वि ग्राम्याः पशव आरण्यैर्व्यापस्तृष्णयासरन् ।
व्यहं सर्वेण पाप्मना वि यक्ष्मेण समायुषा ॥३,३१.३॥

ग्रामीण पशु जंगली पशुओं से अलग रहते हैं और प्यासे मनुष्य से जल अलग रहता है, उसी प्रकार हम समस्त पापों से तथा यक्ष्मादि (रोगों) से मुक्त रहें और दीर्घायु पाएँ ॥३,३१.३॥

वी मे द्यावापृथिवी इतो वि पन्थानो दिशंदिशम् ।
व्यहं सर्वेण पाप्मना वि यक्ष्मेण समायुषा ॥३,३१.४॥

जिस प्रकार द्यावा-पृथिवी पृथक्-पृथक् रहते हैं और प्रत्येक दिशा में जाने वाले मार्ग पृथक्-पृथक् होते हैं। हम भी समस्त पापों से तथा यक्ष्मा (रोगों) से मुक्त रहें तथा दीर्घजीवन पाएँ ॥३,३१.४॥

त्वष्टा दुहित्रे वहतुं युनक्तीतीदं विश्वं भुवनं वि याति ।
व्यहं सर्वेण पाप्मना वि यक्ष्मेण समायुषा ॥३,३१.५॥

जिस प्रकार त्वष्टा (देवता या पिता) पुत्री को (विवाह के समय) पर्याप्त द्रव्य देकर विदा करते हैं और सारे लोक अलग-अलग हैं, उसी प्रकार हम पापों और यक्ष्मा (रोगों) से मुक्त रहें- दीर्घायु प्राप्त करें ॥३,३१.५॥

अग्निः प्राणान्त्सं दधाति चन्द्रः प्राणेन संहितः ।
व्यहं सर्वेण पाप्मना वि यक्ष्मेण समायुषा ॥३,३१.६॥

अग्निदेव प्राणों को जाग्रत् करते हैं, चन्द्रदेव भी प्राणों के साथ सम्बद्ध हैं । हम पापों से और यक्ष्मा (रोग) से मुक्त रहकर दीर्घायुष्य प्राप्त करें ॥३,३१.६॥

प्राणेन विश्वतोवीर्यं देवाः सूर्यं समैरयन् ।
व्यहं सर्वेण पाप्मना वि यक्ष्मेण समायुषा ॥३,३१.७॥

देवताओं ने समस्त सामर्थ्य से युक्त सूर्यदेव को जगत् के प्राणरूप से सम्बन्धित किया । हम समस्त पापों और यक्ष्मा (रोगों) से मुक्त रहकर दीर्घजीवन पाएँ ॥३,३१.७॥

आयुष्मतामायुष्कृतां प्राणेन जीव मा मृथाः ।
व्यहं सर्वेण पाप्मना वि यक्ष्मेण समायुषा ॥३,३१.८॥

(हे बालक !) आयुष्यवानों की दीर्घायु के साथ प्राणवान् होकर जियो, मरो मत । हम तुम्हें समस्त पापों और यक्ष्मा (रोगों) से मुक्त करके दीर्घायु से संयुक्त करते हैं ॥३,३१.८॥

प्राणेन प्राणतां प्राणेहैव भव मा मृथाः ।
व्यहं सर्वेण पाप्मना वि यक्ष्मेण समायुषा ॥३,३१.९॥

श्वास लेने वाले समस्त जीवधारियों के प्राणों के साथ जीवित रहो और अपने प्राणों को मत त्यागो। हम तुम्हें समस्त पापों और यक्ष्मा (रोगों से मुक्त करके, दीर्घ आयु से सम्पन्न करते हैं ॥३,३१.९॥

उदायुषा समायुषोदोषधीनां रसेन ।
व्यहं सर्वेण पाप्मना वि यक्ष्मेण समायुषा ॥३,३१.१०॥

आयुष्य से युक्त बनो, आयुष्य से उन्नत बनो, औषधि रसों से उत्कर्ष पाओ । हम तुम्हें समस्त पापों और यक्ष्मा (रोगों) से मुक्त करके दीर्घ आयु से संयुक्त करते हैं ॥३,३१.१०॥

आ पर्जन्यस्य वृष्ट्योदस्थामामृता वयम् ।
व्यहं सर्वेण पाप्मना वि यक्ष्मेण समायुषा ॥३,३१.११॥

हम पर्जन्यदेव के पर्जन्यवर्षण से अमरत्व और उन्नति प्राप्त करते हैं। हम समस्त पापों और यक्ष्मा (रोगों) से मुक्त होकर दीर्घायुष्य प्राप्त करें ॥३,३१.११॥

॥इति तृतीय काण्डम्॥